कई जा जो संदेश प्रवासी

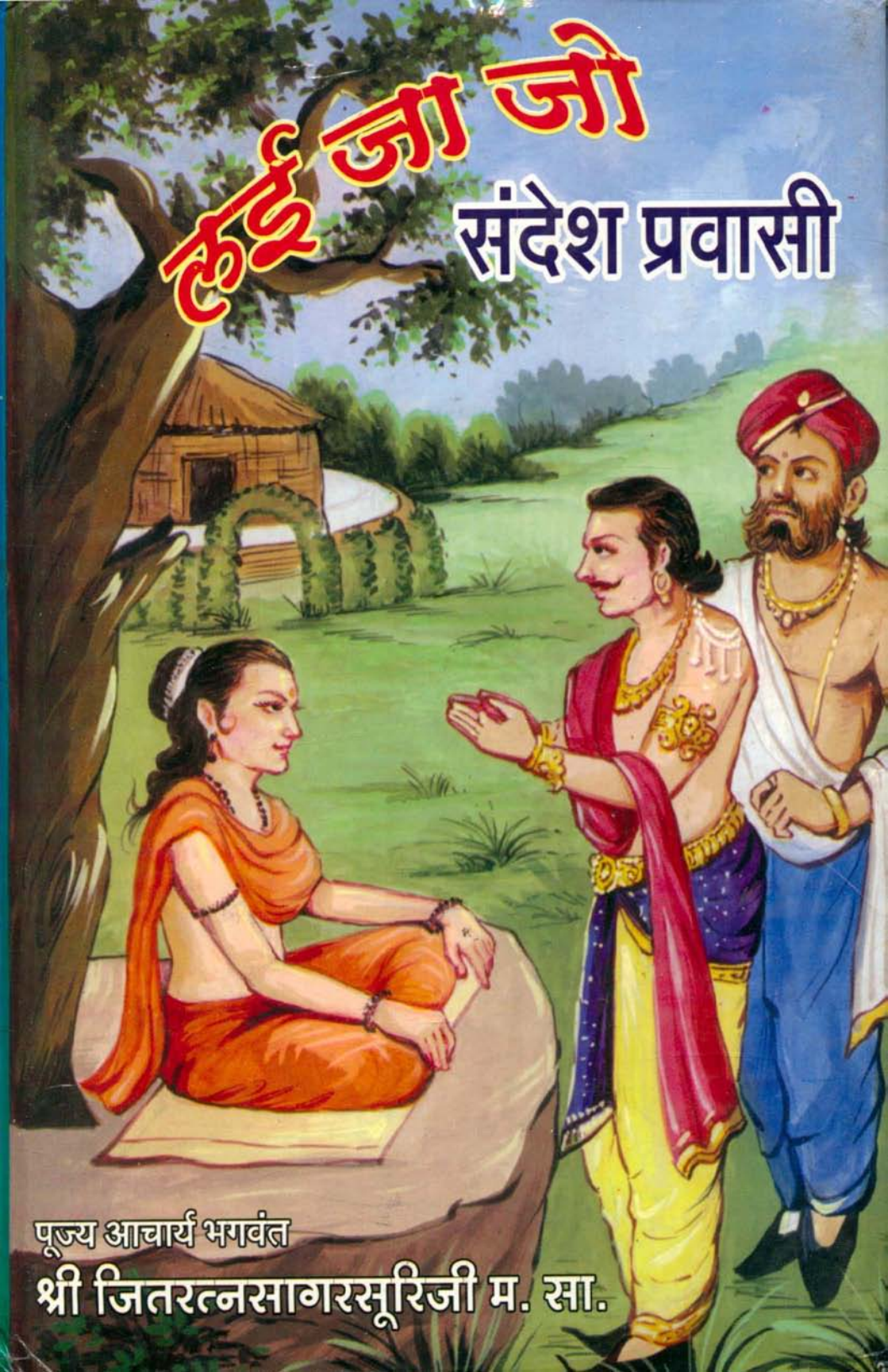

पूज्य आचार्य भगवंत
श्री जितरत्नसागरसूरिजी म. सा.

ज्योतिर्विद आचार्य भगवंत
श्री जिनरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

मालव देश की धन्यधरा गौतमपुरा के ओसवालवंशी मंडोवरा गौत्रीय **श्री मनसुखलालजी** एवं **सौ. मानकुंवर बेन** के आप सुपुत्र है। आपने भर युवा वय में अपनी पत्नी **ताराबाई** सुपुत्री **गुणमाला** सुपुत्र– **जितेन्द्र एवं चन्द्रप्रकाश** के साथ सन् 1977 में पू. शंखेश्वर आगम मन्दिर संस्थापक पूज्य पंन्यास प्रवर **श्री अभ्युदयसागरजी म. सा.** के पास संयम अंगीकार किया। आप मालवदेश का प्रथम परिवार है जिसने एक साथ संयम ग्रहण कर इतिहास बनाया।

आपके परिवार में यूँ तो 22 दिक्षाएँ हुई है जिसमें से अभी 18 श्रमण–श्रमणियाँ प्रभु शासन की प्रभावना कर रहे है।

आप ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान होने के साथ ही **अखण्ड वर्षीतप आराधक** भी है। आपको हमेशा तपस्या चलती रहती है। आप हमेशा नामना से दूर रहकर अपनी आराधना साधना करते रहते है।

उपाश्रय में प्रवेश करते ही आपको हाथ में नवकार वाली दिखाई दे तो समझ लेना वे पूज्य गुरूदेव **श्री जिनरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.** ही है।

आप मालवा के नंदन एवं मालवा के गौरव है। वंदन हो आपके श्री चरणों में!

–महेन्द्रकुमार जैन

पुस्तक सौजन्य

मालव ज्योति साध्वीजी श्री इन्दुश्रीजी म.सा.

की सुशिष्या साध्वीजी श्री तीर्थरत्नाश्रीजी म.सा.

(पुज्य माताजी म.सा.) की शिष्या

तपस्विनी साध्वी श्री गुणरत्नाश्रीजी म.सा.

की पावन प्रेरणा से

झवेरचंद प्रतापचंद

श्री सुपार्श्वनाथ जैन श्वे. मूर्ति संघ

वालकेश्वर रोड़ मुम्बई की

श्राविका बहनों के ज्ञान द्रव्य से

यह अंबड़ चरित्र

लई जा जो संदेश प्रवासी

प्रकाशित किया गया है।

श्री वर्धमानस्वामिने नमः

लई जा जो सन्देश प्रवासी

लेखक

वाणी के जादूगर, मालव मणि, बन्धुयुगल आचार्य देवेश

श्री जितरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

'राजहंस'

सम्पादक

वर्धमान तपोनिधि, बन्धुयुगल आचार्य देव

श्री चन्द्ररत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

प्रकाशक

श्री रत्नसागर प्रकाशन निधि

श्री महेन्द्रकुमार लाभचन्दजी जैन

102, सुखदेव नगर, एरोड्रम रोड़,इन्दौर-452005

फोन : 0731-2620574

- दिव्य कृपा वृष्टि-

शंखेश्वर आगम मंदिर संस्थापक, पूज्य पंन्यास प्रवर गुरूदेव

श्री अभ्युदयसागरजी महाराज साहब

- आशीर्वाद दाता-

मालव भूषण, महान तपस्वी, आचार्य भगवन्त

श्री नवरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

- प्रेरणादाता-

अखण्ड वर्षीतपाराधक, ज्योतिर्विद आचार्य देवेश

श्री जिनरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

- प्राप्ति स्थान -

श्री रत्नसागर प्रकाशन निधि

श्री महेन्द्रकुमार लाभचंदजी जैन

102, सुखदेव नगर, एरोड्रम रोड

इन्दौर- 452 005 (म. प्र.)

विक्रम संवत् 2064 वीर संवत् 2533

ईस्वी सन् 2008

प्रथम संस्करण-2000 प्रति

मूल्य - 70/-

-समर्पण-

जो हमेशा नाम से
अलिप्त रहे,
जिन्होंने
मालवा-मेवाड़
और
विदर्भ के श्री संघों
के वैर-विरोध एवं
वैमनस्य को
अपनी सिद्धियों से मिटाकर
संघों में भाइचारा और संघटन का
वातावरण सर्जा
ऐसे
शंखेश्वर आगम मंदिर संस्थापक
परम पूज्य पंन्यास प्रवर गुरूदेव
श्री अभ्युदयसागरजी म. सा.
के पावन
कर-कमलों में
सादर
सविनय

-जितरत्नसागरसूरि
-चन्द्ररत्नसागरसूरि

कथानक पढ़ने से पूर्व

मुझे बचपन से कहानियाँ सुनना एवं पढ़ना बहुत पसन्द है। मुझे याद है जब मैं बहुत छोटा था तब रात्रि में सोने से पूर्व मैं अपने दादाजी से कहता-'मुझे वार्ता सुनाइए।'

और दादाजी मुझे कहानियाँ सुनाया करते थे। उनमें गुणसार श्रेष्ठि, श्रीपाल-मयणासुन्दरी, आरम शोभा, काला घोड़ा आदि कहानियाँ तो आज भी मुझे अच्छी तरह से याद है।

कहानियाँ सुनकर मैं दादाजी से पूछ लेता-'श्रीपाल जैसा बनने के लिए क्या करना पड़ता है?'

दादाजी कहते-'श्रीपाल बनना हो तो दीक्षा लेनी पड़ती है। तप, त्याग करने पड़ते है। कठोर परिश्रम करने पर महान बना जाता है।'

मैं कहता-'दादाजी, मुझे दीक्षा लेनी है। क्या आप मुझे दीक्षा दिलवाएँगे?'

मेरी बात सुनकर दादाजी मेरा मुँह देखते रह जाते। और मैं कब उनकी गोद में सो जाता पता नहीं रहता।

बस मैं रोज कहानियाँ श्रवण करता एवं महान बनने के स्वप्न देखा करता था।

आपको जानकर आश्चर्य होगा कि मैं महापथ का पथिक यदि बन सका हूँ तो उसमें सबसे अधिक उपकार मुझ पर मेरे दादाजी का ही है अन्यथा मैं संसार में भटक गया होता।

कहानियाँ सुनकर मैं महान बनने का गौरव तो नहीं ले सकता किन्तु इतना अवश्य कह सकता हूँ कि आज मैं जो कुछ भी हूँ उसमें कहानियों ने बहुत बड़ा रोल अदा किया है।

कहानियाँ मेरे लिए उपकारी बनी इसीलिए मैं हमेशा कहानियाँ लिखता रहता हूँ। इस कहानी के लेखन का भी कारण यही है कि मेरी तरह अन्य भी इस कहानी को पढ़कर महापंथ के संत बनकर आत्म कल्याण के राही बन सके।

प्रस्तुत कहानी **'लइ जा जो संदेश प्रवासी'** नाम से मैंने लिखी है। इसमें वीर अम्बड का चरित्र अंकित किया गया है। इस कहानी का आधार आगम ग्रंथ है।

इस कथानक की रचना अम्बड चरित्र के नाम से चन्द्रषौर्णमिक गच्छीय पूज्य आचार्य देव श्री समुद्रघोषसूरिजी म. सा. के शिष्य आचार्य श्री मुनिरत्नसूरीश्वरजी म. ने की है। इस अम्बड चरित्र की रचना आचार्यश्री ने सं. १२२५ के आसपास की है। इस चरित्र को वीर चरित्र भी कहा जाता है।

उपकेश गच्छीय आचार्य श्री हर्षसमुद्रसूरिजी म. सा. के शिष्य श्री विनयसमुद्र ने सं. १५९९ में अम्बड चौपाई की रचना की है। सं. १६३९ में आगम गच्छीय श्री मंगलमाणिक ने अम्बड कथानक चौपाई तथा सं. १८०० में श्री भावविजयजी म. सा. उपाध्याय ने अम्बड रास की रचना की है।

इस कथानक में गौरख योगिनी के सात आदेश है। अम्बड क्षत्रिय द्वारा आदेश का पालन किये जाने की चमत्कारिक बातों का बयान है। अम्बडराज की धनलालसा, वीरता एवं पराक्रम का वर्णन तथा अन्त में परिव्राजक बनने का उल्लेख इस कथानक में किया गया है।

अपार वैभव, लखलुट सम्पत्ति, अमाप भोगसामग्री होने पर भी एक दिन अम्बडराज को धर्म की शरण स्वीकारने को मजबूर होना पडा। इस बात का अद्‌भुत उल्लेख कथानक में बताया गया है। परिव्राजक बनने के बाद जब भगवान महावीर

से अम्बडराज का परिचय हुआ तब अम्बड की श्रध्दा को मजबूत करने के लिए भगवान वर्धमान ने राजगृही जाने वाले अम्बड परिव्राजक से कहा- 'मेरा सन्देश लेकर जाना सुलसा श्राविका के पास।'

'सुलसा कौन ? सारथी पत्नी सुलसा ?'

भगवान वर्धमान ने कहा- 'हाँ.....! वही सुलसा। उसे मेरा धर्मलाभ कहना।'

भगवान स्वयं जिसे धर्मलाभ का संदेश भेजते हो वह सुलसा कैसी होगी ? इसकी कल्पनाकर विद्यासिध्द अम्बड परिव्राजक ने सुलसा की परीक्षा की एवं सम्यकत्व को स्वीकार कर भगवान का शिष्यत्व स्वीकार किया।

बीस स्थानक तप की आराधना के द्वारा तीर्थंकर नामकर्म निकाचित कर आगामी चौवीशी में तीर्थंकर पद पाने वाले अम्बड कुमार का चरित्र रोचक, प्रेरक एवं मनमोहक है। भगवान वर्धमान ने अम्बड के साथ सुलसा श्राविका को धर्मलाभ का सन्देश भेजा था अत: इस कथानक का नाम मैंने 'लई जा जो सन्देश प्रवासी' रखा है।

पाठकगण इस कथानक को पढ़कर अवश्य ही प्रसन्न होंगे ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। इसके साथ ही अम्बड की धन लालसा को समझकर उसकी तरह सर्व त्याग करने की प्रेरणा भी इस कथानक से लेंगे ऐसी आशा है।

कथा प्रसंगों को रोचक, आकर्षक बनाने का प्रयास किया गया है इसके कारण यदि कथानक के अभिप्राय से विरूद्ध कलम चल गई हो तो मिच्छामि दुक्कडम्

- आचार्य

श्री जितरत्नसागरसूरी

प्रकाशकीय

हमें अत्यंत हर्ष हो रहा है कि हमारी संस्था वाणी के जादूगर, मालवमणि, बन्धुयुगल पंन्याय प्रवर श्री जितरत्नसागरजी म.सा. एवं वर्धमान तपोनिधि पंन्यास प्रवर श्री चन्द्ररत्नसागरजी म.सा. के आचार्य पदारोहण अवसर पर **लई जा जो सन्देश प्रवासी** पुस्तक आपके कर कमलों में अर्पण कर रहे हैं।

यह अत्यंत हर्ष की बात है कि आपकी अपनी संस्था श्री रत्नसागर प्रकाशन निधि इन्दौर द्वारा आज यह 160 वीं पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। संस्था की साहित्य यात्रा अविरत गति से चल रही है। उसमें आशीर्वाद सदैव मालव भूषण पूज्य आचार्य भगवंत श्री नवरत्नसागरसूरीश्वरजी म.सा.का प्राप्त होता रहा है। एवं प्रेरणा हमें प्राप्त होती रही है हमारी संस्था के प्रेरणादाता ज्योतिर्विद आचार्य देवेश श्री जिनरत्नसागरसूरीश्वरजी म.सा. से। हम आचार्यद्वय का अन्तःकरण से आभार स्वीकार करते हैं।

आभार तो हम उन गुरुदेवों का भी मानना चाहते हैं जो हमारी संस्था के प्राण है। जो निरन्तर शासन प्रभावना प्रवचनादि में व्यस्त होने के बावजूद भी हमें समय-समय पर पुस्तक लिखकर देते हैं एवं सफल सम्पादन करते हैं। ऐसे वाणी के जादूगर, मालवमणि, बन्धुयुगल आचार्य भगवन्त श्री जितरत्नसागरसूरीश्वरजी म.सा. एवं वर्धमान तपोनिधि श्री चन्द्ररत्नसागरसूरीश्वरजी म.सा. का क्योंकि यदि वे पुस्तक लिखने का एवं सम्पादन करने का श्रम न लेते तो हम पुस्तक प्रकाशित भी कैसे कर पाते ?

इस पुस्तक को चित्रों से सजाने का कार्य किया है। सुप्रसिद्ध चित्रकार श्री श्याम जोशी हातोद वालों ने। उन्होंने अल्प समय में पूज्य गुरुदेवश्री के सानिध्य में रहकर आकर्षक चित्र बनाकर पुस्तक को आकर्षक बनाने का पुरुषार्थ किया है।

पुस्तक प्रकाशन हम कर पाए हैं इसका यश हम श्री सुपार्श्वनाथ जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ की श्राविकाओं को देना चाहते हैं। संघमाता श्रीमती जसुबेन कीर्तिलाल शाह को साध्वी श्री गुणरत्नाश्रीजी म. सा. ने प्रेरित किया एवं जसुबेन ने तत्काल प्रेरणा स्वीकार कर संघ की श्राविकाओं द्वारा ज्ञान द्रव्य से पुस्तक प्रकाशित करने का लाभ लिया है। अतः हम आभारी है श्री सुपार्श्वनाथ जैन संघ वालकेश्वर मुंबई के।

दृश्य-अदृश्य प्रकाशन सहयोगियों का आभार मानना भी नहीं चूक सकते। सभी सहायकों का आभार।

लइ जा जो संदेश प्रवासी के नाम से प्रकाशित अंबड चरित्र खब ही चमत्कारों से भरी प्राचीन कहानी है आशा है आपको बहुत पसन्द आए जो कि गुरुदेव श्री जितरत्नसागरसूरिजी म.सा. ने आज से 25 वर्ष पूर्व आगमोद्धारक मासिक के लिए धारावाहिक के रुप में लिखी थी। जिसे हम आज प्रकाशित कर रहे है।

श्री महेन्द्र जैन
व्यवस्थापक
श्री रत्नसागर प्रकाशन निधि
इन्दौर म.प्र.

गुरुराज को सदा मोरी वन्दना

मालवोद्धारक पू. आचार्य

श्री चन्द्रसागरसूरीश्वरजी म.सा.

शंखेश्वर आगम मंदिर संस्थापक

श्री अभ्युदयसागरजी म.सा.

आगमोद्धारक ध्यानस्थ स्वर्गस्थ

आ. श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी म.सा.

मालव भूषण पूज्य आचार्य

श्री नवरत्नसागरसूरीश्वरजी म.सा.

ज्योतिर्विद पूज्य आचार्य

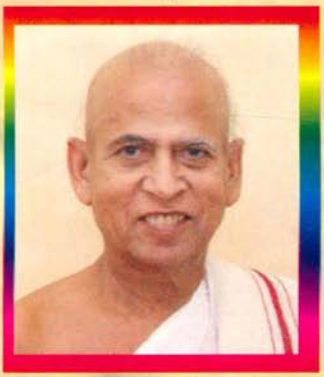

श्री जिनरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

योगिनी का आदेश

बहुत पुरानी बात है।

जब त्रिलोक प्रकाश महावीरदेव स्वयं पृथ्वीतल को पावन करते थे।

उस समय अनेक देवालयों से सुशोभित अलकापुरी की तुलना करने वाली श्रीवास नामक नगरी थी।

नगरी के विशाल राजमार्ग ही नगरी की समृध्दि का बयान कर रहे थे। राजमार्ग पर धनकुबेरों की बड़ी-बड़ी हवेलियाँ नगरी की शोभा में अभिवृध्दि कर रही थी।

श्रीवास नगरी के राजसिंहासन को उन दिनों महाप्रतापी महाराजा विक्रमसिंह शोभायमान करते थे। राजा न्यायी, प्रजाप्रिय एवं पराक्रमी थे। उनकी परोपकारी वृत्ति के कारण वे देश-देशान्तर में विख्यात हो गए थे। आज तक उनके दर पर जो भी आया वह खाली हाथ नहीं लौटा था। देश-देशान्तर के लोग उन्हें कल्पवृक्ष-कामधेनु के रूप में ही मानते थे। याचकों के लिए वे चिंतामणि थे।

एक दिन की बात है।

महाराजा विक्रमसिंह राजसभा में बिराज रहे थे। उनके पास भद्रासन पर एक ओर महामन्त्रीश्वर एवं दूसरी ओर सरसेनाधिपति बैठे हुए थे। एक तरफ राजपुरोहित एवं एक तरफ नगर सेठ बैठे थे। सामने दरबारी बैठ गए थे। राज्य की कार्यवाही प्रारम्भ हो रही थी। इतने में एक तेजस्वी युवक ने राज्यसभा में प्रवेश किया।

महाराजा विक्रमसिंह के दरबार में प्रवेश पाने के लिए कभी भी किसी को भी अनुमति की आवश्यकता नहीं रहती थी। किन्तु इस नव-आगन्तुक की चाल ढ़ाल एवं रूप-रंग में ही ऐसी विशेषता थी कि महाराजा विक्रमसिंह सहित सभी दरबारियों का ध्यान युवक की तरफ आकर्षित हुआ।

वैसे आगन्तुकयुवक के शरीर पर न तो कोई बहुमूल्य वस्त्र थे एवं न चमकीले हीरे मोती के अलंकार। किन्तु फिर भी कृत्रिम कांति को निस्तेज कर देने वाली स्वाभाविक शांत-प्रशांत प्रभा उसके अंग-अंग से प्रकट हो रही थी।

युवक के नेत्रों से कुलीनता तथा मुखारविंद से श्रीमन्ताई के भाव स्पष्ट झलक रहे थे। वैसे इस समय उस कुलीनता एवं श्रीमन्ताई पर दरिद्रता का गहरा परदा पड़ा हुआ था। फिर भी चतुर व्यक्ति को सरलता से पता चल जाता था कि युवा किसी सामान्य घराने की सन्तान न होकर कोई खानदानी कुल में जन्मा हुआ है।

नवागन्तुक युवक नम्रता के साथ आगे बढ़ा एवं महाराजा विक्रमसिंह के चरणों में पूर्ण श्रध्दा एवं समर्पण के साथ नमन किया।

महाराजा विक्रमसिंह ने पूछा-'युवक'...! मुझे लगता है तुम इस देश में प्रथम बार ही आए हो ?

'हाँ राजन्...!' युवक ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

राजा ने पूछा-'तेरा नाम...?'

'लोग मुझे कुरूबक के नाम से पुकारते है राजन्...!'

'क्या तू यह बताएगा कि यहाँ कैसे आना हुआ ?'

क्यों नहीं बताऊँगा राजन्...? कुरुबक बोला-'आप लोगों ने मेरे पिता अम्बड़ नरपति का नाम तो सुना ही होगा ?'

अम्बड़ क्षत्रिय का नाम सुनकर ही दरबारी आश्चर्य चकित हो गए। देश-देशान्तर में जिस अम्बड़ नरपति के पराक्रम के यशोगान मुक्त कण्ठ से गाए जाते हो उसे कौन नहीं जानता होगा ? किन्तु अम्बड़राज के पुत्र की ऐसी अवदशा देखकर राजा तथा दरबारी आश्चर्य चकित हो उठे। राजा ने पुनः पूछा-'तू अम्बड़राज का पुत्र है ?'

'हाँ राजन्...।'

'तो तेरी ऐसी अवदशा कैसे हुई वत्स...?' महाराजा ने दुखार्त स्वरों में पूछा।

कुरुबक ने कहा- 'राजन्...! कर्मराजा के पंजे से कोई छूट सका है क्या ? इस संसार में कर्मराजा ने ऐसा जाल बिछाया है कि उस जाल में मैं भी आकंठ फँस गया हूँ।

सभासद कुरुबक का वृत्तांत जानने को आतुर हो उठे तब कुरूबक ने सुमधुर वाणी में कहा- राजन्...! पहले तो मेरे पिता अम्बड़ क्षत्रिय भी दरिद्र ही थे। धन उपार्जन करने के लिए उन्होंने खूब ही पुरुषार्थ किया। मन्त्र-तन्त्र एवं औषधियों के प्रयोग भी किए किन्तु फिर भी

उनका दारिद्र दूर नहीं हुआ। ज्ञानियों ने ठीक ही कहा है -

अभ्यास कारिणी विद्या, बुध्दिः कर्मानुसारिणी।
दानानुसारिणी कीर्तिः,लक्ष्मीः पुण्यानुसारिणी॥

अभ्यास करने से ही विद्या की प्राप्ति होती है। बुध्दि कर्म के अनुसार ही पैदा होती है। दान के अनुसार कीर्ति का विस्तार होता है एवं पुण्य के अनुसार ही लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

'आकाश-पाताल एक करने के बाद भी जब मेरे पिताजी को धन की प्राप्ति नहीं हुई तब वे धनपर्वत पर निवास करने वाली गौरख योगिनी के शरण में जा पहुँचे। उन्होंने योगिनी की इतनी सेवा भक्ति की कि वह पिताजी पर प्रसन्न हो गई। उसने पिताजी को सात आदेश दिए एवं पिताजी ने भी अपने पराक्रम से सातों आदेश का पालन किया परिणामतः उनके पास अष्टसिध्दि एवं नवनिधि का सदा निवास हो गया।'

महामन्त्री ने अम्बड़ पुत्र कुरुबक से कहा- 'हे अम्बड़ वंश विभूषक...! उस गौरख योगिनी के द्वारा बताया गया धन प्राप्ति का मार्ग एवं तेरे पिताजी का पराक्रम सुनने की हमारी इच्छा है अतः तू सारी घटना विस्तार से हमें सुना।'

'मैं वही घटना आपको सुनाने आया हूँ।' अम्बड़ पुत्र कुरुबक ने कहा- 'इसके बाद मुझे जो निवेदन करना है वह करूँगा।'

कुरुबक आसन पर बैठ गया। उसे स्वाभाविक रुप से मधुर वाणी का वरदान प्राप्त हुआ था। राजकुमार कुरुबक ने अपने पिता अम्बड़राज के पराक्रम की यशोगाथा कहना प्रारम्भ की।

आप जानते ही है कि धन की आशा-अपेक्षा से मेरे पिता अम्बड़राज

ने धरती का चप्पा-चप्पा छान डाला किन्तु फिर भी वे असफल रहे। धन पर्वत पर निवास करने वाली गौरख योगिनी की ख्याति उन्होंने सुनी। अत: अन्त में वे वहाँ पर पहुँचे।

योगिनी के पास आज तक कोई सफल नहीं हुआ। मात्र पराक्रमी एवं साहसी व्यक्ति ही वहाँ सफल होता था। कायर एवं डरपोक का वहाँ कोई काम नहीं था। मेरे पिताजी महापराक्रमी एवं साहसी भी थे। अत: वे धनपर्वत पर पहुँचे। गौरख योगिनी के पास जाकर नमन कर बैठ गए।

गौरख योगिनी ने पूछा- 'वत्स...! यहाँ आने का प्रयोजन क्या है ?'

'मेरा नाम अम्बड है।' पिताजी ने कहा- 'मैं आपके पास इसलिए आया हूँ कि संसार में कही भी मेरी मनोकामना पूर्ण नहीं हो सकी है। आशा है आपके आशीर्वाद से मेरी मनोकामना पूर्ण हो जाए।'

'यहाँ जो भी आता है वह अपनी इच्छा पूर्ण करके ही जाता है। योगिनी बोली- तू क्या चाहता है अम्बड़ ?'

'मैं धन का आकांक्षी हूँ माँ...।' अम्बड़ ने कहा- 'मैंने धनप्राप्ति के लिए जगत के सारे पुरूषार्थ कर लिए है किन्तु फिर भी मुझे लक्ष्मी नहीं मिली है। आप मुझे धनप्राप्ति का उपाय बता सकती है ?'

योगिनी ने कहा- 'वत्स...! सारे जहाँ पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि बिना उद्यम एवं साहस के लक्ष्मी ने आज तक किसी भी व्यक्ति पर कृपा नहीं की है अत: तुम्हें भी प्रयत्न करना पड़ेगा। मेरा बताया प्रयत्न तूने कर लियो तो लक्ष्मी तेरे चरण चूमती आ जाएँगी।'

'आप जो भी कहोगे, मैं करने को तैयार हूँ।' अम्बड़ ने कहा-

'यदि आप कहो तो आकाश-पाताल एक कर दूँ। आप आदेश दे कि मैं क्या करूँ ?'

योगिनी ने कहा- 'प्राणों की परवाह किए बिना क्या तू मेरे सात आदेशों का पालन कर सकेगा ?'

'आप आदेश देकर देखो।' अम्बड़ ने साहसी एवं पराक्रमी पुरुष की तरह प्रत्युत्तर दिया- 'मैं आपके आदेशानुसार कार्य करने को तैयार हूँ।'

'तो मेरा पहला आदेश सुन...!' योगिनी ने कहा- ''तू जैसे-जैसे मेरे आदेश का पालन करता जाएगा वैसे-वैसे मैं तुझे दूसरे-तीसरे आदेश देती जाऊँगी। एवं यदि तूने आदेशों का पालन करके दिखाया तो सारे विश्व की धन-सम्पत्ति और वैभव तेरे चरणों को चूमने लगेंगे।'' योगिनी ने अम्बड़ की आशा एवं श्रृद्धा देखकर उसे उत्तेजित करते हुए कहा।

'हे माता...! इस तरह की बातें श्रवण कर तो मैंने बहुत समय गवाँया है। ऐसे आश्वासनों से अब मेरा पेट नहीं भरता है। मैं आपके पास भीष्म प्रतिज्ञा लेकर आया हूँ चाहे जो हो जाए आपके आदेशानुसार मैं धन-सम्पत्ति प्राप्त करके ही रहूँगा। अब आप जल्दी आदेश करें मुझे क्या करना है ?'

अम्बड़ की मेरू जैसी अचल दृढ़ता देखकर गौरख योगिनी ने अपना पहला आदेश सुनाया।

'यहाँ से पूर्व दिशा में गुणवंदना नामक एक वाटिका है। उसमें शतशर्करा नामक एक पेड़ है। उस वृक्ष का एक फल लाकर मेरे सामने प्रस्तुत करें।'

'जैसी आपकी आज्ञा।' कहकर अम्बड़राज योगिनी को प्रणाम कर पूर्व दिशा की तरफ चल दिया।

अम्बड़ क्षत्रिय गौरख योगिनी से धन प्राप्ति हेतु आदेश प्राप्त करते हुए।

स्त्री राज्य एवं कौतुक

प्रभात का समय था।

अभी सूर्य रश्मियाँ धराचुम्बन लेने नहीं आई थी। विहंगवृंद की सुमधुर सुरावलियों से गगन गुँजायमान हो उठा था। विहंगवृंद दाना चुगने के लिए चारों दिशा में जाते दृष्टिगोचर हो रहे थे। पूर्वाकाश में लालिमा दिखाई दे रही थी।

अम्बड़ क्षत्रिय ऐसे आल्हादक वातावरण का आनंद लेते हुए गौरख योगिनी के आदेश का विचार करते हुए तीर के वेग की तरह गुणवंदना नामक वाटिका की ओर जा रहा था। उसने बहुत कुछ मार्ग तय कर लिया था।

सूर्य उदित होने की दो घड़ियाँ बीतने पर अम्बड़ ने दूर-दूर हवेलियों की विशाल अट्टालिकाएँ देखकर सोचा नजदीक में कोई बड़ा नगर होना चाहिए। किन्तु यह कौन सा नगर होगा?

अम्बड़ भी शत शर्करा वृक्ष का स्मरण करते हुए जल्दी-जल्दी चलकर नगर के बाहर की शोभा रूप सरोवर के किनारे पर पहुँचा। सरोवर में कमल खिल रहे थे। बतख एवं सारस पक्षी सरोवर की शोभा में अभिवृद्धि कर रहे थे।

अम्बड़राज का मार्गजन्य श्रम सरोवर की शोभा देखकर ही दूर हो गया। अम्बड़ ने सरोवर में हाथ पैर धोए एवं थोडा पानी पीया, थोड़ी देर श्रम दूर करने के लिए किसी छायादार पेड़ की छाया में विश्राम करने लगा, क्योंकि वहाँ आसपास का वातावरण सौम्य था।

अचानक अम्बड़ ने देखा कि सात आठ पुरुष सरोवर की तरफ आ रहे थे। किन्तु उनके सिर पर पानी भरने के मटके थे। इससे अम्बड़ को आश्चर्य हुआ। पहले तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ। उसे लगा कि मेरे देखने में गलती हो रही है, या मैं सत्य देख रहा हूँ अथवा मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ।

अम्बड़ ने जरा स्वस्थ होकर देखा तो उसकी भ्रांति अधिक समय न टिक सकी। उसने देखा कि वास्तव में सिर पर पानी भरने के मटके लेकर सरोवर की तरफ आने वाले पुरुष ही है।

अम्बड़ आगे कुछ सोचे इतने में तो दूसरी तरफ से आठ दस स्त्रियाँ अश्वों पर सवार होकर विनोद करती हुई सरोवर की तरफ आ रही थी। उन अश्वारूढ़ नारियों के मुख पर लज्जा या संकोच के भाव नहीं थे बल्कि पुरुषों की भाँति दृढ़ता एवं कठोरता के भाव दृष्टिगोचर हो रहे थे।

आश्चर्यचकित होकर अम्बड़ सोचने लगा- यह नगर संसार के नगर से भिन्न प्रतीत हो रहा है। अन्यथा स्त्रियाँ पुरूष का कार्य करें एवं पुरूष स्त्री का कार्य करे यह कैसे सम्भव है ? उसे लगा कि इस नगर के निवासी उल्टी खोपड़ी के लगते है।

अम्बड आगे कुछ सोचे इतने में वहाँ एक युवक आया। अम्बड़ ने उस युवा से पूछा- 'दोस्त...! यह कौन सा नगर है ?'

'कुंकुमण्डल के नाम से यह नगर विख्यात है।' युवक ने धीरे से प्रत्युत्तर दिया।

'तुम्हारा नाम ?'

'लोग मुझे धनंजय के नाम से जानते हैं।'

'धनंजय...! बड़ा प्यारा नाम है तुम्हारा।' अम्बड़ ने कहा-'अच्छा 'धनंजय..., तुम यह बता सकते हो कि यहाँ के पुरुष स्त्रियों की तरह क्यों दिखाई दे रहे है ? मुझे लगता है कि संसार के क्रम को उलटाने के लिए या प्रकृति के विरुध्द क्रांति करने की तैयारियाँ हो रही है। क्या यह सत्य है या मेरी भ्रांति...?'

धनंजय ने प्रत्युत्तर देने के बजाय मुँह पर अंगुली रखकर मौन रहने का इशारा किया।

इससे अम्बड़ का आश्चर्य और भी बढ़ गया। उसे लगा कि यहाँ की नारियों की शक्ति इतनी अधिक बढ़ गई है कि पुरुष वर्ग उनकी बातें करने से भी घबराता है। उनके विपरीत प्रत्युत्तर देना भी इस नगर में राजद्रोह माना जाता होगा ?

'धनंजय...!' अम्बड़ ने कहा- 'संक्षिप्त में भी तुम इस नगर की विपरीत परिस्थिति का बयान करोगे तो चलेगा।'

'धनंजय बोला- इस प्रश्न के प्रत्युत्तर में मौन रहना ही श्रेयस्कर है। क्योंकि हमारे वार्तालाप को किसी भी स्त्री ने सुन लिया तो आपकी और मेरी दुर्गति हो जाएँगी।'

'किन्तु नारियों से इस तरह डरने का कोई कारण ?' अम्बड़ ने पूछा- आखिर नारियाँ तो अबला ही है। उन्हें वश में करके अपने चरणों में झुकाना रमन मात्र है। मुझे तो लगता है धनंजय कि तुम पुरूष लोग अपना पौरुषत्व गवाँ बैठे हो। स्त्रियों के दास बनकर जीने से तो मृत्यु ही श्रेयस्कर है। इस तरह का विपरीत आचार मुझसे देखा नहीं जाता है। यदि मेरा बस चले तो मैं एकाकी ही पुरूषों को जागृत कर स्त्रियों के सारे अधिकार छीन लूं...।

अम्बड़ अपना वाक्य पूर्ण करे उससे पूर्व वहाँ एक वृध्द स्त्री आ

धमकी। उसने सत्तावाही स्वरों में कहा - 'अरे मुसाफिर...! तू बड़ा अहंकारी प्रतीत हो रहा है किन्तु इस स्त्री राज्य में तू भी इन पुरुषों की तरह स्त्रियों का गुलाम है। इस नगर में तुझे भी स्त्रियों की आज्ञा का पालन करना होगा।'

अम्बड इस चुनौती का प्रत्युत्तर देने को तत्पर था कि पुनः वह वृध्दा बोली- 'लोग जिसे अम्बड़ के नाम से जानते है वह तू स्वयं ही है क्या ?'

'हाँ मैं स्वयं अम्बड़ क्षत्रिय हूँ।' अम्बड़ ने कहा- 'किन्तु तुमने मेरा परिचय कहाँ से प्राप्त किया ?'

'तुम आने वाले हो यह तो मैं कभी से जानती ही थी।' वृध्दा बोली-'अन्य के यहाँ ठहरने के बजाय मेरे घर ही मेहमान बनो एवं तुम्हें जो भी पूछना हो मुझसे ही पूछ लेना।'

अम्बड़ ने अपना साहस एकत्रित कर कहा- 'चलो, मैं तुम्हारा आतिथ्य स्वीकार करता हूँ।' अम्बड़ सरोवर के किनारे से उठ खड़ा हुआ एवं वृध्दा के साथ चल दिया।

नगर के मध्य में होकर वृध्दा के साथ-साथ अम्बड़ एक महल के द्वार पर आया। द्वार पर नारियाँ सशस्त्र पहरा भर रही थी। वृध्दा को उन द्वार रक्षिका नारियों ने नमन किया एवं एक तरफ हट गई।

वृध्दा के साथ-साथ अम्बड़ ने भी महल में प्रवेश किया। अन्दर घुसते ही अम्बड़ समझ गया कि यह महल ही नहीं बल्कि राजमहल है। क्योंकि अन्दर ऋद्धि-सिद्धि-समृद्धि का सागर लहरा रहा था। चारों तरफ किले से सुरक्षित उस महल में यत्र - तत्र - सर्वत्र नारियाँ खुली तलवारें लेकर घूम रही थी।

धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए दोनों महल के अन्दर के भाग में जा पहुँचे। अम्बड़ ने देखा कि महल में विशाल, स्वच्छ सुन्दर बगीचा था। चारों तरफ हरियाली लहरा रही थी। हरी घास लॉन के मैदान पर एक नवयौवना निश्चिंत भाव से क्रीडा में मग्न थी।

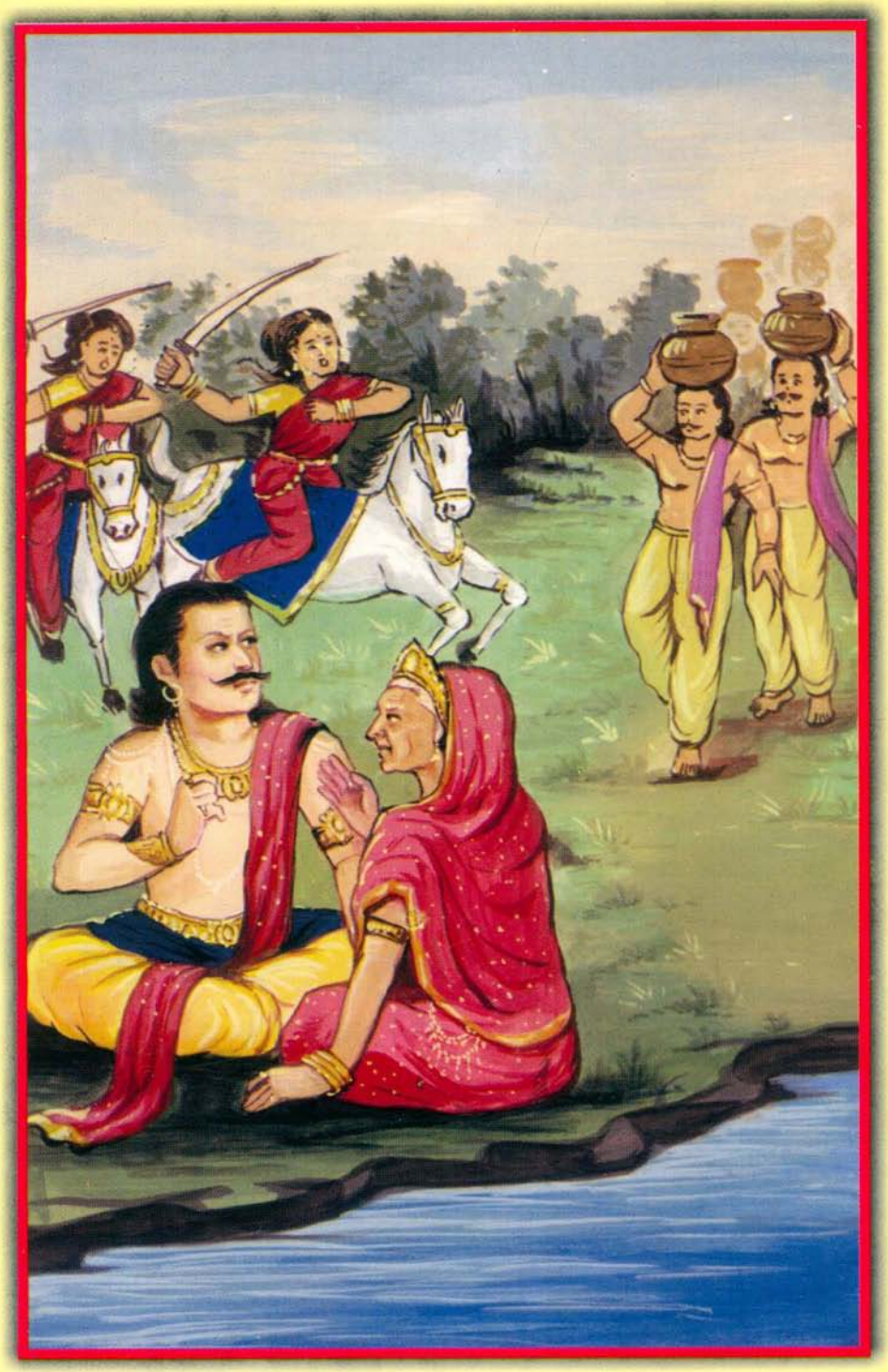

कुंकुम नगर में विपरित आचरण देख स्त्री राज्य की अधिष्ठात्री चन्द्रावती की माता से चर्चा करते हुए अंबड़ क्षत्रिय

उसने अम्बड़ को देखा किन्तु आओ, पधारो जैसा सामान्य विनय-विवेक भी नहीं किया। वैसे अम्बड़ को इस बात का ज्यादा आश्चर्य नहीं हुआ क्योंकि नगर की सीमा में प्रवेश करते ही उसे इस बात का भलीभाँति परिचय हो गया था। अम्बड़ को आश्चर्य तो इस बात का हुआ कि, यह तो मनुष्य लोक है किन्तु यहाँ यह अप्सरा कैसे आ गई ?

वैसे युवती का वर्ण सम्पूर्ण गोरा नहीं था। उसमें श्यामवर्ण की हल्की-सी झलक दिखाई देती थी। उसके भाल-प्रदेश पर सौभाग्य के उदय सदृश्य अद्भुत कांति किसी राज्य की अधिष्ठात्री होने का आभास करा रही थी। उसके विशाल नेत्र तथा यौवन के भार से लचीली देहलता किसी भी योगी-महात्मा का अभिमान नष्ट करने के लिए समर्थ थी।

अम्बड़ के कदम वही रुक गए। वह सौंदर्य की सरिता समान नवयौवना को एक टकी आँखों से देखने लगा। उसका मन कविता करने को उतारू हो गया।

'ओह...,कोमलता की कविता है यह...।

प्रेम की प्रतिमा है यह...।

सौन्दर्य की सरिता है यह...।'

अम्बड़ आगे कुछ सोचे उससे पूर्व ही वह वृद्धा बोल उठी-'तुम गौरख योगिनी के आदेश से ही शत शर्करा वृक्ष का फल लेने आए हो ना ?'

'हाँ...! किन्तु यह सब आप कैसे जानती है ?'

'यह मैं बाद में बताऊंगी।' वृद्धा ने कहा-'जब तक तुम्हें शत शर्करा वृक्ष का फल प्राप्त न हो जाए तब तक तुम इस महल में निवास करो। अब यहाँ से मेरी अनुमति के बिना तुम बाहर भी नहीं जा सकते हो।'

एक वृद्धा नारी को अपने ऊपर शासन चलाते देखकर ही अम्बड़ की आँखें लाल हो गई। तब वृद्धा ने पुनः कृत्रिम मृदु स्वरों में कहा- 'यहाँ तुम्हें डरने का कोई कारण नहीं है। जब तक तुम शत शर्करा वृक्ष का

फल प्राप्त न कर लो तब तक यही सुखपूर्वक मेरी पुत्री चन्द्रावती के साथ रहो। यह तुम्हें सहायक बनेगी। तुम भी इसके साथ निर्दोष सुखों का आनंद लूटो।'

अम्बड़ तो जो चाहता था वह मिल रहा था। जब से अम्बड़ ने चन्द्रावती को देखा था उसका मन मचल गया था। वृद्धा ने जब कहा कि तुम चन्द्रावती के साथ रहो तब अम्बड़ के आनंद का पार न रहा। उसने देखा कि चन्द्रावती के आस-पास सूर्य-चन्द्र-मंगल-राहु एवं केतु की गेंद पडी हुई है। उन गेंदो में से किसी भी गेंद को उछाल कर अकेली ही अपना मनोरंजन कर रही है। सूर्य का महाप्रकाश चारों तरफ फैल रहा था ,उसमें चन्द्रावती बैठी हुई थी।

जब माता ने अम्बड़ से कहा-'तुम मेरी पुत्री के साथ निर्दोष सुखों का आनंद लूटो' तब चन्द्रावती ने अम्बड़ की ओर देखा एवं खड़ी होकर वह हीरण की चपलगति से अम्बड़ के पास आकर बोली-'भद्र...! मैं कई दिनों से तुम्हारे जैसा साथी ढूँढ़ रही थी, चलो हम गेंद खेलें। यहाँ गेंद खेलने के अलावा अन्य कोई कार्य नहीं है।'

अम्बड़ ने चन्द्रावती के सम्मुख देखा। उसके मुख पर लज्जा नहीं थी वह पुनः सारस सी मीठी वाणी में बोली-'खेलने से पूर्व शर्त भी तय हो जानी चाहिए।'

अम्बड़ ने कहाँ-'तुम्हीं शर्त बताओ।'

चन्द्रावती ने कहा-'गेंद को ऊपर उछाल कर पुनः हाथ में झेल लेनी होगी। गेंद नीचे नहीं गिरनी चाहिए यदि गेंद नीचे गिर गई तो वह हारा हुआ माना जाएगा और जीतने वाले की उसे चरणसेवा करनी होगी।'

शर्त सुनकर अम्बड़ विचार में पड़ गया। शर्त जरा कठिन है किन्तु एक नवयौवना से डर जाना अच्छा नहीं है। मानकर उसने कहा-'तेरी शर्त मुझे स्वीकार है चन्द्रावती।'

और अम्बड़ तथा चन्द्रावती गेंद खेलने लगे। चन्द्रावती ने एक के

बाद एक गेंदे आकाश में उछालकर पुन: हाथ में झेल ली। क्योंकि यह खेल उसके लिए नया नहीं था। वह इस खेल में प्रवीण थी। जिस वक्त वह जो गेंद फैंकती ऐसा प्रकाश उनमें से निकलता था जैसे ही उसने सूर्य की गेंद फैंकी तो चारों ओर आकाश में सूर्य की किरणें जगमगा उठी। चन्द्र की गेंद फेकने पर, पूर्णिमा के प्रकाश की तरह दिशाएँ व्याप्त हो गई। राहु एवं मंगल की गेंद फेंकने पर क्रमश: रात्रि एवं दिवस के प्रकाश से अखिल विश्व स्नान करने लगा। चन्द्रावती का यह कौशल देखकर अम्बड़ दिग्भ्रमित हो उठा।

अब नंबर अम्बड़ का आया। उसे लगा कि उसने आज झूठा साहस कर आफत मोल ले ली है फिर भी उसने अपना साहस जुटा कर चन्द्रावती से कहाँ-'अब मेरा नम्बर है अत: तू अब मेरा कलाकौशल देख।'

अम्बड़ की बात सुनकर गर्व से मुस्कुराती हुई चन्द्रावती ने गेंद अम्बड़राज के हाथ में दी।

अम्बड़ ने सूर्य की गेंद हाथ में लेकर उसे आकाश में उछाली। सम्पूर्ण आकाश सूर्य की हजारों लाखों किरणों से व्याप्त हो गया। गेंद जब नीचे आने लगी तब उसकी किरणों के कारण अम्बड़ की आँखे चकाचौंध होने लगी। अम्बड़ के होश उड़ गये। चन्द्रावती की गेंद को उपर फैंकने के कारण वह भी मूर्च्छित होकर उपर की ओर उछला एवं गेंद के सूर्य प्रदेश में जाकर गिरा।

चन्द्रावती ने भी उसी क्षण किसी मन्त्र के प्रभाव से गेंद को आकाश में ही रोक दी। गेंद आकाश में स्थित हो गई। गेंद के साथ अम्बड़राज भी आकाश में लटकने लगा।

इधर चन्द्रावती हँसती कूदती अपने अन्त:पुर में चली गई। 'अब मजा आएगा।' यह उसके अन्तिम शब्द अम्बड़ ने सुने तो वह पुन: वह घबरा उठा।

शक्तिरूपा चन्द्रवती

मध्यान्ह बीत चुका था।

सूर्य मध्याकाश से अस्ताचल की ओर जाने को उतावला हो उठा था। महासाहसी अम्बड़ अभी भी आकाश में मूर्च्छित अवस्था में ही लटक रहा था।

अचानक वहाँ से नागड़ नामक सारथी गुजरा। उसने सूर्य के तेजस्वी प्रकाश में तेजस्वी पुरूष को लटकते हुए देखा। उसे आश्चर्य हुआ आखिर यह कौन है ? इस अवस्था में क्यों लटक रहा है ?

नागड़ के दिल में दया आ गई। उसने मनोमन मूर्छित युवक को मुक्त करने का निश्चय किया। उसने सोचा सबसे पहले इस युवक को होश में लाना चाहिए। इसके लिए मुझे चन्द्रमंडल से अमृत लेकर आना होगा।

नागड़ सारथी अमृत लेने के लिए चन्द्रमाँ के समीप जा पहुँचा। किन्तु वहाँ चन्द्रमाँ नहीं था। उसका स्थान खाली देख नागड़ सारथी चन्द्र की पत्नी रोहिणी के पास गया। रोहिणी उस वक्त रुदन कर रही थी। उसको रुदन करते देख नागड़ सारथी ने उससे पूछा-' हे भगिनी..., तू रूदन क्यों कर रही है ?'

रोहिणी ने कहा-'क्या बताऊँ मेरे दुर्भाग्य की बात ?'

' मैं तेरी मदद कर सकता हूँ।' नागड़ सारथी बोला-'किन्तु तू बताए

चन्द्रावती के साथ गेंद खेलते समय अंबड़ स्वयं ही सूर्यग्रह के साथ
उछलकर आकाश में जा लटका

तो ही पता चले कि तुझे क्या दुःख है ?।'

रोहिणी बोली-' मनुष्यलोक में निवास करने वाली चन्द्रावती का नाम तो आपने सुना ही होगा ?'

' हाँ...! ' सारथी ने कहा-'उस स्त्री राज्य की अधिष्ठात्री का ही पूछ रही हो ना तुम-?'

' हाँ...! ' रोहिणी ने कहा-'वह चन्द्रावती ही मेरे पति चन्द्रदेव को मन्त्रों से बन्दी बनाकर अपने साथ ले गई है। बस उस दिन से मेरे सुख की सन्ध्या अस्त हो गई है। मैं अपने पति के विरह में रो-रो कर अपना समय निर्गमन कर रही हूँ।'

सती रोहिणी की हृदय द्रावक कथा श्रवणकर नागड़ सारथी को बहुत क्रोध आया। साथ ही चन्द्रावती के दुष्कृत्य पर द्वेष भी पैदा हुआ। एक मनुष्य लोक की नारी चन्द्रदेव को बन्दी बनाकर ले जाए यह तो पूरे देवलोक का अपमान है। उसने रोहिणी से कहा- 'हे भगिनी...! तू शांत हो जा थोडा धैर्य धारण कर, मैं देवों के इस अपमान का बदला लेकर ही देवलोक में आऊँगा। जब तक उस दुष्ट नारी के अत्याचार को समाप्त नहीं करता तथा तेरे स्वामी चन्द्रदेव को वापिस नहीं लौटा लाता तब तक मैं अमरलोक में कदम नहीं रखूँगा।'

नागड़ सारथी अपने सारे कार्य छोड़ कुमकुममंडल नगर की ओर चल दिया। जब वह नगर में पहुँचा तो उसने भी वहाँ विपरीत आचरण देखा तो आश्चर्य हुआ । वह नारी के इस आधिपत्य को तोडने के निश्चय के साथ चन्द्रावती के निवास की ओर चल दिया।

जैसे ही नागड़ सारथी चन्द्रावती के महल में घुसा कि चन्द्रावती उसे सामने से आती नजर आई। उसने बिना अनुमति प्रवेश करने वाले नागड़ सारथी पर नागपाश नामक अस्त्र छोडकर बन्दी बना लिया। नागड़ सारथी नागों के बन्धन में जकड़ कर बंध चुका था।

नागड़ को कल्पना भी नहीं थी कि एक नारी में भी इतना सामर्थ्य

होगा। चन्द्रावती भी नागड़ सारथी को बांध कर निश्चिंत हो अपनी माता के पास चली गई।

नागड़ सारथी चन्द्रदेव एवं अम्बड़ को मुक्त कराने आया था किन्तु स्वयं भी चन्द्रावती के हाथ कैद हो गया। जब इस बात का पता नागड़ सारथी की बहिन सर्पदुष्टश्रृंखला को चला तो वह अपने भाई की मदद को दौड़ आई। उसने उसी क्षण गरुडास्त्र छोड़कर नागपाश तोड़ दिया।

नागड़ सारथी जब बंधन मुक्त हुआ तो प्रतिशोध की भावना से चन्द्रावती को मारने के लिए दौड़ा। भाई की मनोभावना जानकर सर्पदुष्टश्रृंखला बोली-'भद्र...! तू इस नारी को सामान्य समझ रहा है किन्तु इसे पराजित करना तेरे बस की बात नहीं है। अतः तू इसके साथ वैर न बांध।'

किन्तु नागड़ सारथी का क्रोध बहिन की बात से शांत नहीं हुआ। उसके दिल में क्रोध की ज्वालाएँ लपकारें मार रही थी। तब सूर्यदेव ने कहा-'वत्स...! यह नारी मंत्र शक्ति से सारे विश्व को गुलाम बना सकती है। इसलिए तो मेरे जैसे को भी अनिच्छा से इनके बंधन में रहना पड रहा है अतः तू शान्त होकर अपने स्थान पर जा।'

सूर्यदेव की वाणी से नागड़ सारथी का रोष कुछ कम हुआ। किन्तु प्रतिशोध की भावना नष्ट नहीं हुई। उसने चन्द्रावती से बदला लेने की ठान ली।

इसके लिए नागड़ ने सबसे पहले मायाकुण्डली नामक शक्ति की आराधना कर उसे जागृत की। इससे नागड़ की शक्ति बढ़ गई।

वह सीधा चन्द्रावती के महल में आया। एवं क्रोधित हो उसकी माता भद्रावती को माया कुण्डली से मार डाला।

चन्द्रावती को इस बात का पता चला तो वह नागड़ सारथी से बदला लेने दौड़ आई किन्तु नागड़ ने माया कुण्डली से उसे भी पराजित कर दिया।

पराजित चन्द्रावती से उसने कहाँ-'पहले तुम सूर्यदेव-चन्द्रदेव-मंगल-राहु आदि को मुक्त कर दो अन्यथा मैं तुम्हें अब जीवित नहीं रहने दूँगा।'

W 395917

चन्द्रावती ने तत्काल सभी को मन्त्र से मुक्त कर दिया। नागड़ सारथी ने सभी को अपने-अपने स्थान अमरभूमि पहुँचा दिया। खुब खुश हो गई।

नागड़ सारथी रोहिणी से अमृत मांगकर अपने साथ लेकर चला। वह सीधा अम्बड़ के पास आया। जैसे ही नागड़ सारथी ने अंबड़ पर अमृत छींटा कि अम्बड़ की मूर्छा दूर हो गई वह पृथ्वी पर आया।

उस समय सूर्यदेव ने प्रसन्न होकर कहा-'इस साहसी पराक्रमी अम्बड़राज को हम कभी नहीं भूलेंगे। क्योंकि इनके कारण ही हमारा भी मोक्ष हुआ है। अन्यथा हम यहाँ न जाने कब तक कारागृह के कैदी की तरह कैद रहते।'

सूर्यदेव ने खुश होकर कहा- 'जा..., अम्बड़ जा..., मैं तुझे वरदान देता हूँ कि तू अनंतजेता बनेगा।'

इस प्रकार अचानक वरदान प्राप्त करके अम्बड़ के आनन्द की सीमा नहीं रही। खुश होकर अम्बड़ ने पुनः पुनः सूर्यदेव की प्रार्थना की। इसके कारण सूर्यदेव ने विशेष खुश होकर अम्बड़ को आकाशगामिनी एवं इन्द्रजालिनी नामक विद्या भी प्रदान की। एवं शत शर्करा के पेड़ के फल भी लाकर अम्बड़ को दिए। फल का प्रभाव बताते हुए सूर्यदेव ने कहा-'वत्स...! ये फल जब तक तेरे पास है तब तक तू इस संसार में दुःखी नहीं होगा। तू इस फल को अब अपने पास रखकर जीवन में धर्म और पराक्रम के कार्य कर जीवन सफल बनाना।'

नागड़ सारथी एवं सूर्यदेव का आभार मानते हुए अम्बड़राज वहाँ से चल दिया। सूर्यदेव एवं नागड़ पिता-पुत्र भी अपने स्थान पर चले गए।

अम्बड़ ने सर्वप्रथम सूर्यदेव द्वारा प्रदत्त विद्याएँ सिद्ध की। तत्पश्चात् इन्द्रजालिनी विद्या के प्रभाव से अम्बड़ ने साक्षात् शंकरजी का रूप बनाकर चन्द्रावती के घर जाकर दर्शन दिए।

अपने घर पर भगवान शंकर को आए जान चन्द्रावती ने उनका स्वागत-सत्कार किया। भक्तिपूर्ण वाणी से गद्‌गद् हो चन्द्रावती बोली-

'आज मेरे आँगन में पधारकर आपने बडी कृपा की है । मैं आज कृत्यकृत्य...!'

चन्द्रावती अपने वाक्य को पूर्ण करे उससे पहले तो शंकरजी फूट-फूट कर रूदन करने लगे । चन्द्रावती इस रुदन का मतलब न समझ पाई । उसने दोनों हाथ जोड़कर पूछा- 'भोले भगवान्...! आप तो सर्वशक्तिमान है । विश्व के कर्ता हर्ता भी आप ही माने जाते है । किन्तु आप रुदन क्यों कर रहे है ?

'मैं शक्तिसम्पन्न हूँ किन्तु आज मुझ पर बडी आपत्ति के बादल छा गए है । मेरे जैसा दु:खी इन्सान इस दुनियाँ में शायद ही होगा ।' शंकरजी ने रोते हुए कहा ।

'आपको क्या दु:ख है भोलेनाथ...?' चन्द्रावती ने पूछा- 'आप बताएँ तो मैं उस दु:ख को दूर करने का प्रयास करूँ ।'

शंकरजी ने कहा- 'मेरे दु:ख को दूर करने के लिए दुनिया में कोई समर्थ नहीं है । फिर तुझे वह दु:ख बताने से क्या मतलब है ?' शंकरजी ने रोते हुए कहा ।

'भोलेनाथ...!' चन्द्रावती बोली-' मेरी शक्ति सारी दुनिया को झुकाने की है । अत: आप बताइये कि आपको क्या दु:ख है ?'

'मेरे दु:ख की कहानी तुझे क्या कहूँ...?' भोलेनाथ ने कहा- 'पिछले कुछ दिनों से पार्वती मुझसे रुठकर सदा के लिए मुझे छोड़कर चली गई है ।' शंकरजी पुन: फूट-फूट कर रोने लगे ।

चन्द्रावती विचार में पड़ गई । शंकरजी का यह दु:ख कैसे मिटाया जा सकता है यह वह सोचने लगी । उसने शंकरजी से पूछा-' भगवान्...! मैं आपके इस संकट को कैसे दूर कर सकती हूँ ?'

' यदि तू मेरा दु:ख मिटाना चाहती है तो मेरे साथ शादी कर ले ।' महादेवजी ने कहा-' इसके कारण मेरे दु:खों का अन्त हो जाएगा ।'

'कहाँ मैं पामर नारी और कहाँ आप भोलेनाथ...?' चन्द्रावती बोली-

'आप मेरे साथ शादी कैसे करेंगे एवं मैं भी आपके योग्य कैसे बनूँगी ?'

'तू मेरे योग्य बन सकती है।' शंकरजी बोले-'इसका उपाय तो मैं जानता हूँ। मानव भी एक उपाय से देवता योग्य बन सकता है।'

'तो वह उपाय मुझे बताइये।' चन्द्रावती बोली-'यदि मैं आपके साथ शादी करने के लिए योग्य बन सकती हूँ तो इससे अधिक सौभाग्य की बात मेरे लिए अन्य क्या हो सकती है ?'

शंकरजी ने कहा-'वह उपाय तभी बताया जा सकता है कि उसे अपना कर मेरे साथ शादी करने को तुम तैयार हो।'

'मैं आपके साथ शादी करने को तैयार हूँ।' चन्द्रावती बोली-'ईश्वर के साथ शादी करने को भला कौन अस्वीकार करता है ?'

'तो वह उपाय तुम ध्यानपूर्वक सुनो...।'महादेवजी ने कहा-'सर्वप्रथम मस्तक मुण्डवा कर कीमती वस्त्र एवं आभूषण का त्याग कर, फटे पुराने मैले कुचले वस्त्र धारण कर, मुहँ पर कोयला लगाकर गधे पर बैठकर, नगर के बाहर सरोवर के किनारे पर तू आना। वहाँ मैं तेरे साथ शादी करूँगा। बोल तू यह उपाय कर सकेगी ?' शंकरजी ने चन्द्रावती को बराबर अपनी चंगुल में फसाने हेतु जाल बिछाया।

चन्द्रावती भी उस जाल में आबाद फँस गई। उसने कहा-'मैं आपके साथ शादी करने के लिए एक नहीं पच्चीस उपाय करने को तैयार हूँ। आपके जैसा साथी मिलता हो तो इससे अधिक मुझे और क्या चाहिए ?'

शंकरजी तो चले गए किन्तु मध्याह्न होने पर चन्द्रावती ने अपना मस्तक मुण्डवा लिया। मुँह पर कालिख पोत ली एवं फटे पुराने वस्त्र पहन कर गधे पर बैठकर वह नगर के राजमार्गों से गुजरती हुई सरोवर के किनारे पर जाने लगी।

तमाशे को तेड़ा नहीं। नगर के लोग यह देख मन-मन में ही मुस्कुराने लगे। जरुर कोई सेर के माथे सवा सेर मिल गया लगता है। हजारों की संख्या में लोग सरोवर की पाल पर एकत्रित होने लगे।

अम्बड़राज के पराक्रम

मध्याह्न बीत रहा था।

कुमकुममंडल नगर के नागरिक नगर के बारह सरोवर के किनारे पर एकत्रित होकर गधे पर बैठी चन्द्रावती पर हँस रहे थे। क्योंकि उसने अपने देह पर जीर्णशीर्ण वस्त्र धारण कर रखे थे। मुँह पर कालिख पोत रखी थी एवं महादेवजी के आने की राह देख रही थी।

नगरजनों में भी कौतुहलवृत्ति पैदा हो गई थी। वे आपस में चर्चा कर रहे थे क्या सचमुच महादेवजी चन्द्रावती के साथ शादी करने आएँगे या कोई छल प्रपंच या कपट किया जा रहा है ?

स्त्रियाँ तो चन्द्रावती के भाग्य की प्रशंसा कर रही थी। अहो अपनी स्वामिनी चन्द्रावती कैसी भाग्यशाली है ? जिसके साथ शादी करने स्वयं भोलेनाथ आ रहे है।

इतने में सामने से भोलेनाथ की सवारी आते हुए लोगों ने देखी अत: लोग कहने लगे-'अरे,अरे देखो...! वे भोलेनाथ आ रहे है। वे चन्द्रावती के साथ शादी करके चन्द्रावती को गोद में बिठाकर कैलाश पर्वत पर ले जाएँगे।

जैसे ही अम्बड़वेशधारी महादेवजी चन्द्रावती के निकट आए तब असाधारण भीड़ के कारण कहो या दैवयोग समझो चन्द्रावती का गधा

भड़क उठा। इसके कारण चन्द्रावती भूमि पर गिर पड़ी। गधे ने चन्द्रावती को पाँच सात लातें ठोक दी एवं भाग गया। उसके कारण नगरजन हँसने लगे। चन्द्रावती लज्जित हो उठी।

चन्द्रावती ने भोलेनाथ से कहा-'प्रभु...! आपके सामने ही यह अधम प्राणी मेरा अपमान कर रहा है और आप चुपचाप देख रहे हो ? अपनी मादा का अपमान तो पशु नर भी सहन नहीं करता है। किन्तु आप मेरे कष्ट निवारण तो दूर मेरी हँसी उडा...।'

चन्द्रावती अपना वाक्य पूर्ण करे उससे पूर्व महादेवजी के वृषभ ने धूम मचा दी। उसने भी चन्द्रावती को पाँच-सात लातें जड़ दी एवं भाग खड़ा हुआ।

लोगों में हँसी का पात्र बनी चन्द्रावती सोचने लगी यदि जमीन रास्ता दे तो मैं जमीन में समा जाऊँ।

नगर के पुरुष जो कि आज तक नारियों के अत्याचार से ऊब गए थे कहने लगे-'चन्द्रावती...! तेरे अहंकार का फल तुझे आज प्राप्त हो गया है।

जब चन्द्रावती ने आँखें उठाकर देखा तो वहाँ शिवजी नहीं थे बल्कि लोग ही उसकी हँसी उडा रहे थे।

चन्द्रावती को कांटों तो खून न निकले ऐसी दशा में देख शिवजी ने अपना मूल स्वरूप अम्बड़ के रूप में वहाँ पदार्पण किया शिवजी के स्थान पर वरराजा के रूप में अम्बड़ क्षत्रिय को देख चन्द्रावती को मृत्यु से अधिक पीड़ा उत्पन्न हुई।

अम्बड़ क्षत्रिय ने कहा-'चन्द्रावती...! तुझे अपनी गेंद के खेल की शर्त तो याद है ना ?'

'हाँ...।' चन्द्रावती बोली-'किन्तु इससे क्या...?'

अम्बड़राज बोला-'मैं सूर्यप्रदेश से जीतकर लौट आया हूँ अत: शर्त के अनुसार तू मेरे साथ शादी कर।'

'किन्तु तुमने मेरा अपमान क्यों किया ?'चन्द्रावती ने आवेश में आकर कहा-'तुम मानव नहीं दानव हो।'

'अगर तुमने मुझे ज्यादा चिढ़ाया तो इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा।' अम्बड़ ने कहा-'अभिमान का परिणाम ही तुझे भोगना पड़ रहा है। यदि तू अभी भी नहीं समझी तो मैं तेरी ऐसी दशा कर दूँगा कि तू जिंदगी भर लोगों को अपना मुँह नहीं दिखा सकेगी।'

चन्द्रावती के पास इसका कोई उत्तर नहीं था। वह जड़ पाषाण की तरह वहीं बैठी रही। नगरजन उसकी हँसी उडाते हुए अपने-अपने स्थान पर चले गए।

अम्बड़ ने पुनः अपनी शर्त दोहराई 'तुम हार गई और मैं जीत गया। अतः तुम शर्त के अनुसार मेरे चरण की सेवा करने के लिए तैयार हो जाओ।

चन्द्रावती का अहंकार नष्ट हो चुका था। उसका दिल अम्बड़ की बुद्धि पर पानी की तरह पिघलने लगा। उसने सोचा रूप में कामदेव के समान यह पुरूष पराक्रम एवं साहस में भी उतना ही बढ़कर है। बुद्धि चातुर्य तो इसके बाप का। इसने मेरे जैसी अहंकारी नारी का अहंकार चूर कर रख दिया। अतः उससें अच्छा पुरूष मुझे कहाँ मिलने वाला है ?

चन्द्रावती अम्बड़राज के चरणों में गिरकर बोली-'आज तक मैंने अपने चरणों में अनेकों को झुका कर अपना मस्तक सदा उन्नत रखा है किन्तु आज यह मस्तक आपके चरणों में झुक रहा है। मैं आज आपके चरणों में अपना जीवन समर्पित कर रही हूँ। आप मुझे स्वीकार करें। मैंने नारी जाति के योग्य आचरण नहीं किया इसके लिए मैं क्षमा चाहती हूँ।'

अम्बड़ क्षत्रिय के आनंद का पार नहीं रहा। एक शक्तिरूपा नारी उसकी जीवन संगिनी बन रही थी। अम्बड़ ने चन्द्रावती को उठाकर आलिंगन किया एवं चन्द्रावती के साथ चन्द्रावती की हवेली पर आकर आनंद-प्रमोद से समय गुजारने लगा।

पुण्योदय होते ही पुण्यशाली जीव के मनोरथ सिद्ध हो जाते है। एक दिन धन-दौलत के लिए एकाकी भटकता अम्बड़ पुण्योदय होते ही विद्याओं का स्वामी बन गया इतना ही नहीं चन्द्रावती जैसी असीम शक्ति की स्वामिनी पत्नी के रूप में प्राप्त हुई।

देव-देवी की तरह वे सुख-भोग में अपना समय निर्गमन करने लगे।

समय सरिता की तरह प्रवाहित होने लगा।

एक दिन की बात है।

अम्बड़राज अपनी प्रिया चन्द्रावती के साथ बैठा था। वार्ता-विनोद में उनका समय जा रहा था।

अम्बड़राज ने पूछा-'प्रिये ...! एक बात बताओगी ?'

'एक क्या, अनेक बातें बताने को यह दासी तैयार है नाथ...!'चन्द्रावती बोली-'आप जो भी जानना चाहते है वह बिना संकोच पूछ लीजिए।'

'मैं यह जानना चाहता हूँ कि इस नगर में स्त्री-पुरूष की रहनी-करनी विपरीत क्यों है ?'अम्बड़ ने पूछा-'यहाँ आदमी के कार्य स्त्रियाँ एवं स्त्रियों के कार्य पुरुष क्यों करते है ?'

'यह नगर मैंने अपनी विद्याशक्ति से बसाया है नाथ।' चन्द्रावती ने कहा-'यहाँ मेरी शक्ति के कारण ही विपरीत आचरण नगर में प्रचलित है। इस नगर में जो भी विरुद्ध आचरण हो रहा है इसके लिए मैं ही जवाबदार हूँ। नगरजन इसमें निर्दोष है। वे तो मात्र मेरी आज्ञा का ही पालन कर रहे है।'

अम्बड़ ने आश्चर्य व्यक्त करते हूए पूछा-'यदि मेरे से छुपाने जैसा नहीं हो तो मैं जानना चाहता हूँ कि तेरे पास कौन-कौन सी विद्याशक्तियाँ है ?'

'नाथ ...! आपसे छुपाने जैसा अब क्या है।' चन्द्रावती ने कहा-'मैं अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर चुकी हूँ। मेरे पास आकाशगामिनी, चिन्तितगामी विद्याएँ है इसके अलावा मेरे पास आकर्षित करने वाली

तथा रूप परिवर्तन करने वाली आकर्षणी एवं रूप परावर्तनी नामक विद्याएँ भी है। इन विद्या शक्तियों के कारण मैंने इस नगर के लोगों को दास बना रखे है। तथा स्त्रियों को स्वतंत्रता प्रदान की है।'

चन्द्रावती की इतनी अपूर्व शक्ति जानकर अम्बड़ क्षत्रिय को बडी प्रसन्नता हुई। वह मन ही मन भाग्य की सराहना करने लगा।

एक दिन अम्बड़ को अपना घर-नगर-परिवार याद आया अत: उसने चन्द्रावती से कहा-'प्रिये ...! यहाँ रहते हुए मुझे बहुत समय हो गया है। अब मेरा मन यहाँ नहीं लगता। यदि तू कहे तो अपन मेरे नगर को चले।'

'प्राणेश ...! आपकी इच्छा वही मेरी भी इच्छा।' चन्द्रावती बोली-'आप आज्ञा कीजिए. मैं आपकी आज्ञा का पालन करने को तैयार हूँ। कब चलेंगे यहाँ से ?'

'आज से तीसरे दिन यहाँ से निकल चलें।'अम्बड़ बोला-'जब तक तू सारी तैयारियाँ कर ले।'

'जैसी स्वामीनाथ की आज्ञा।' चन्द्रावती बोली एवं उसने सारी तैयारियाँ करनी प्रारम्भ की। कुमकुम मंगल नगर में उसने अपने छोटे भाई को राजा बनाकर राज्य उसे सौप दिया।

अम्बड़ ने सारभूत सुवर्णरत्नादि के साथ चन्द्रावती को लेकर अपने नगर के लिए प्रस्थान किया।

जैसे ही वह नगर में पहुँचा कि सर्वप्रथम गौरख योगिनी के चरणों में शत शर्करा वृक्ष के फल समर्पित करते हुए नमन किया।

योगिनी ने भी अम्बड़ को सकुशल फल लेकर आया देख आशीर्वाद दिए।

अम्बड़ ने पूछा-'माता ...! अब मेरे लिए दूसरा क्या आदेश है ?'

कमल कांचन योगी

'वत्स ...!'

'आप आज्ञा करे माँ।' अम्बड़ क्षत्रिय बोला- 'मैं प्रथम आदेश की तरह आपके दूसरे आदेश का भी पालन करूँगा।'

गौरख योगिनी बोली- 'इधर से दक्षिण दिशा में विशाल समुद्र के बीच हरिछत्र नामक द्वीप है। उसमें कमलकांचन नामक योगी रहता है। उसके यहाँ अप्सराओं को शर्मा दे ऐसी सौन्दर्य की सरिता समान 'अन्धारिका' नामक पुत्री है। तू उसे लेकर मुझे समर्पित कर।'

'जैसी माताजी की आज्ञा।' अम्बड़ ने कहा। क्योंकि वह सभी प्रकार के साहस एवं पराक्रम के लिए तैयार था। यूँ भी वह योगिनी के आदेश से ही सुखी हुआ था।

एक क्षण का भी विलम्ब किए बिना अम्बड़ अपनी आकाशगामिनी विद्या से आकाश में उडते हुए किसी द्वीप में जा पहुँचा। द्वीप का वातावरण अत्यंत रमणीय था। वहाँ के वृक्ष छायादार एवं फल वाले थे। विकसित वनराजी देखकर अम्बड़ क्षत्रिय का मन प्रफुल्लित हो गया। वह एक छायादार वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगा।

उसने सोचा- यह हरिछत्र द्वीप ही होना चाहिए। उसने चारों ओर दृष्टिपात किया किन्तु कही भी उसे कमलकांचन योगी का आश्रम दिखाई नहीं दिया। यत्र-तत्र-सर्वत्र घना वन एवं उसके चारों ओर समुद्र की लहरे ही दृष्टिगोचर हो रही थी। द्वीप शांत एवं पवित्र जान पडता था। मानो देवताओं ने अपने विहार के लिए ही उसका निर्माण किया हो।

अम्बड़ ने सोचा- इस तरह यहाँ आराम करने से मेरा कार्य सफल नहीं हो सकता है। मुझे चारों तरफ योगी के आश्रम की तलाश करनी चाहिए।

अम्बड़ उठ खड़ा हुआ। उसने चारों तरफ नजर दौडाई। थोडा आगे बढ़ा की सामने से किसी वनवासी को उसने आते हुए देखा। अम्बड़ ने राहत की साँस ली चलो इसी से पूछने पर अब पता चल जाएँगा।

जब वनवासी नजदीक आया तब अम्बड़ ने उससे पूछना चाहा किन्तु इससे पूर्व ही वह वनवासी बोल उठा-'क्या तुम ही अम्बड़ क्षत्रिय हो ?'

दूर देशान्तर में एकन्तवासी के द्वारा अपना नाम सुनकर ही अम्बड़ चौक पड़ा। बडा आश्चर्य हुआ उसे किन्तु अपने आश्चर्य को छुपाकर कोई प्रत्युत्तर न देते हुए प्रश्न किया-

'क्या नाम है इस द्वीप का ?'

'लोग इसे हरिछत्र द्वीप के नाम से जानते है।' वनवासी ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा।

'क्या तुम बता सकते हो कि इस द्वीप में कमलकांचन नामक योगी कहाँ रहता है ?'अम्बड़ ने प्रश्न पूछा।

किन्तु वनवासी ने उत्तर देने के बजाय प्रश्न किया-' क्या कार्य है

तुम्हें कमलकांचन योगी का ?'

'मैं एक आवश्यक कार्य के लिए यहाँ आया हूँ।' अम्बड़ ने कहा- 'मुझे उनसे मिलना है। क्या आपने उनका आश्रम देखा है।'

वनवासी बोला-'आप जिसे मिलना चाहते हो वह कमलकांचन योगी मैं स्वयं ही हूँ।' वनवासी ने अपना परिचय दिया।

सुनकर ही अम्बड़ जरा क्षोभ खा गया। वैसे अम्बड़ के लिए यह पहला प्रसंग नहीं था। अत: वह स्वस्थ होकर इस बात को भूलने का प्रयास करने लगा।

योगी ने कहा-'यदि आपको मेरा ही कार्य है तो आप मेरे आश्रम पर पधारिए।'

अम्बड़ ने योगी का आमन्त्रण स्वीकार लिया एवं योगी के आश्रम पर आया। दोनों आपस में बातचीत ही कर रहे थे कि अन्दर के कक्ष से किसी नारी के रुदन की आवाज आई।

कमलकांचन योगी तत्क्षण रूदन की आवाज श्रवण कर खण्ड से निकलकर अन्दर गया। कक्ष के कोने में बैठकर उसकी पुत्री अन्धारिका रूदन कर रही थी। जब योगी ने पूछा-'बेटी...! तू क्यों रुदन कर रही हैं ?'

'तात्...! आप भी अनभिज्ञ की तरह क्या पूछ रहे हो?' अन्धारिका ने कहा-'यह अम्बड़ नामक धूर्त मुझे पकडने के लिए आया है। क्या आप इस बात को भूल गए हो ?' इतना कहने पर अन्धारिका का हृदय भर आया। वह पुन: फूट फूट कर रोने लगी।

अपनी प्यारी बेटी को आश्वासन देते हुए कमलकांचन योगी बोला- 'बेटी...! जब तक तेरा बाप कमलकांचन योगी जिन्दा है तब तक

कोई भी तेरा बाल बाँका नहीं कर सकता है। तू निरर्थक रुदन कर रही है।' योगी ने अपनी बिटिया के मस्तक पर प्यार भरा हाथ फेरते हुए कहा।

पिता-पुत्री का वार्तालाप बाहर खड़े-खड़े दीवार के पीछे से अम्बड़ क्षत्रिय ने सुना। अपने उद्देश्य को बिना बताए यह बात योगी की पुत्री अन्धारिका को कैसे पता चली ? किन्तु अम्बड़ इस बात का कोई निर्णय न ले पाया। किन्तु उसने इतना तो तय कर ही लिया कि ये लोग सम्पूर्णतया सावधान है। शक्तिशाली भी है अत: मुझे भी बड़ी कुशलता पूर्वक जाल बिछाना होगी।

अम्बड़ आगे कुछ विचार करे इससे पूर्व योगी बाहर आया। अम्बड़ भी सर्वथा अनभिज्ञ की तरह सरल स्वभाव से योगी के सामने देखने लगा। परन्तु योगी इस तरह अम्बड़ के दिखावे से धोखे में आने वाला नहीं था। उसने वहाँ आते ही पूछा-'तुम गौरख योगिनी के कहने से ही यहाँ आए हो ना ?'

अम्बड़ ने सोचा- अब यथार्थ छुपाने से कोई मतलब नहीं है अत: अम्बड़ ने कहा-'हाँ, मैं गौरख योगिनी के आदेश से ही आया हूँ।'

'ठीक है, मैं तुम्हें अतिथि समझकर तुम्हारा स्वागत करता हूँ।' योगी ने कहा-'तुम यहाँ आनंद से रहो एवं सुख पूर्वक समय निर्गमन करो।'

योगी ने अपने एक शिष्य के साथ अम्बड़ को अपने निवासस्थान पर भेज दिया। कमलकांचन योगी की कागी एवं नागी नामक दो पत्नियाँ थी। उन्हें पहले से ही योगी ने सावधान कर रखा था। उन्हें पता था कि आज यहाँ गौरख योगिनी के आदेश से अम्बड़ नामक क्षत्रिय अतिथि के रूप में आने वाला है। अत: वे घर के आँगन में उसके स्वागत के लिए खड़ी थी।

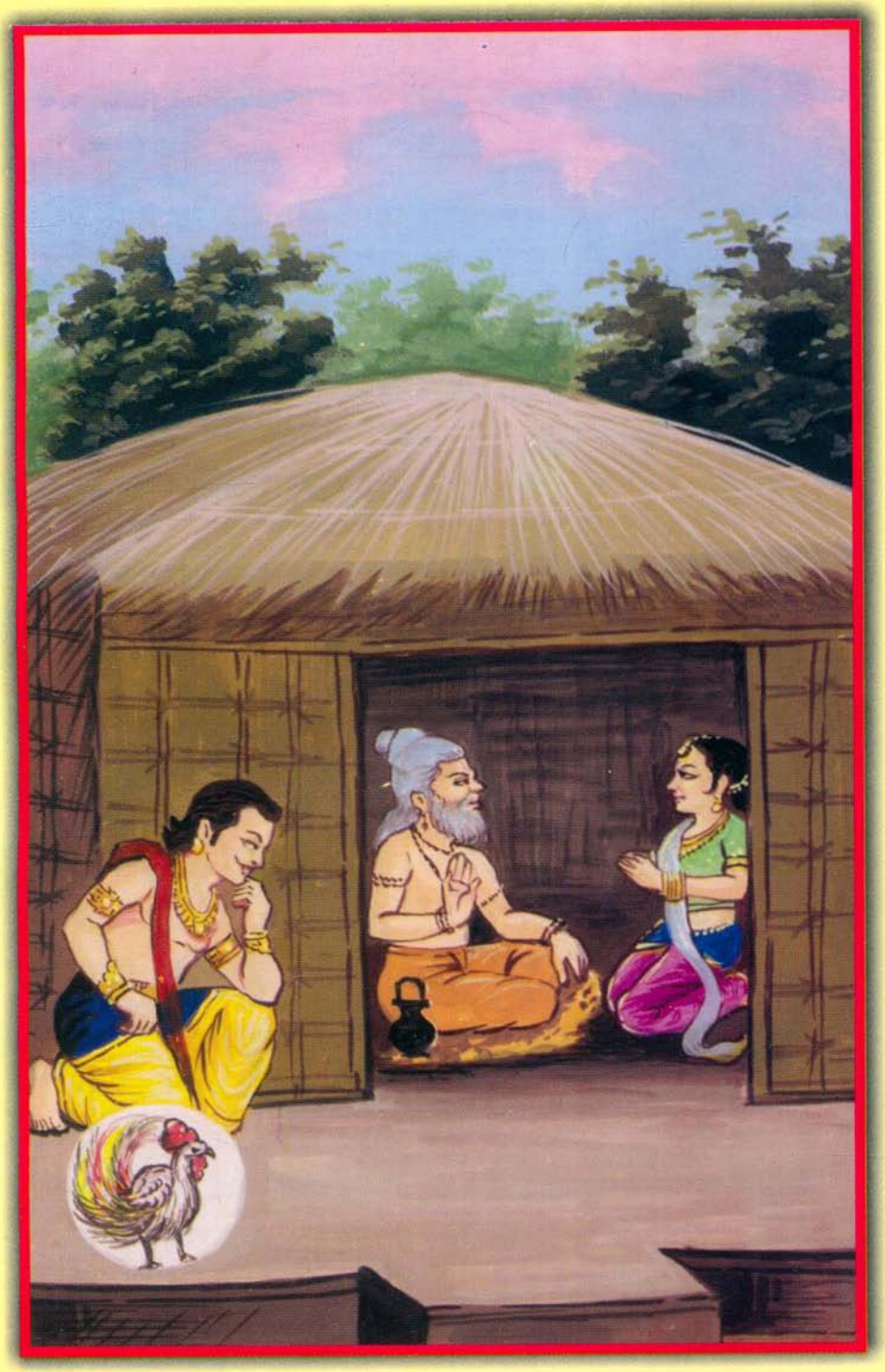

कमल कांचन योगी पुत्री अंधारिका को आश्वासन दे रहे है। अंबड़ को बाहर रहकर बातें सुनते देख कागी-नागी ने उसे मूर्गा बना दिया।

गृहांगन में अम्बड़ को आया देख वे दोनो बोल उठी-'क्या तुम ही हो अम्बड़ क्षत्रिय ?'

आभार एवं आश्चर्य के साथ अम्बड़ ने मस्तक हिला कर सम्मति प्रदान की।

कागी और नागी ने अम्बड़ का स्वागत किया। स्नानादि कराकर अम्बड़ को भोजन कराने के लिए बैठाया। किन्तु अम्बड़ यह नहीं समझ सका कि यह आतिथ्य-सत्कार कृत्रिम है। अम्बड़ उन दोनों अबलाओं के स्नेह जाल में फस गया।

अम्बड़ भोजन कर रहा था तभी अचानक उसे कुछ होने लगा। चक्कर आने लगे और अचानक वह मनुष्य से मुर्गा बन गया। कागी नागी ने भोजन में ऐसी औषधि पहले से ही मिला दी थी कि वह मनुष्य से मुर्गा बन गया।

भाग्य क्या नहीं कर सकता है ? क्षण भर पहले जो पृथ्वी को भयभीत करने वाला अम्बड़ क्षत्रिय असहाय एवं निरुपाय बन गया। उसका बल, उसकी बुद्धि, कला और कुशलता भी उसकी रक्षा नहीं कर सके। ज्ञानियों का कथन सत्य ही है- बड़े-बड़े महारथी भी भाग्य के आगे लाचार हो जाते है।

अम्बड़ के मुर्गा बन जाने से कागी और नागी ने अपनी क्रूरता प्रदर्शित करनी प्रारम्भ कर दी। वे मुर्गे रूप अम्बड़ का तिरस्कार करते हुए कहा करती-'अरे दुष्ट..., तू मेरी ही पुत्री का अपहरण करने चला आया। अब तू तेरी दुर्बुध्दि का फल भोग। तुझे सलाह देने वाली गौरख योगिनी तो सही-सलामत बच गई और तू फॅस गया।'

अम्बड़ की हालत बडी दयनीय हो गई। क्योंकि वह न तो मनुष्य

भाषा बोल सकता था और न ही प्रतिकार कर सकता था। अत: वह मन मार कर दोनों नारियों के अत्याचार सहन करते रहता था।

कमलकांचन योगी भी कभी-कभी मुर्गा रूप अम्बड़ की कदर्थना करते रहता था। और अम्बड़ सहा करता था। इसके अलावा कोई मार्ग भी नहीं था।

कर्म की गति न्यारी होती है। विद्याधरों के साथ स्पर्धा करने वाला महापराक्रमी अम्बड़ पिंजरे का पंछी बन गया।

किन्तु फिर भी अम्बड़ हिम्मत नहीं हारा। अनेक प्रकार के दु:खों को भोगते हुए वह समय व्यतीत करता रहा। उसे विश्वास था कि एक दिन वह अवश्य ही मनुष्य बनेगा एवं इस अमानुषी व्यवहार का बदला लेगा।

कागी नागी एवं कमलकांचन योगी भी बहुत दिन बीत जाने के कारण उस मुर्गे से ऊब गए। योगी ने पत्नियों से कहा-'इस पापी को घर में रखने से क्या ? इसे निकाल दो अपने घर से। जंगल में भटक-भटक कर भूख और प्यास से यह बेमौत मर जाएँगा।'

दोनों पत्नियों को सलाह पसन्द आ गई । उन्होंने मुर्गे को जंगल में छोड दिया। और अपने घर चली आई।

मुर्गा रूप अम्बड़ इसी समय की राह देख रहा था। क्योंकि मानव का भाग्य कब और कैसे चमकेगा यह तो ज्ञानियों के अलावा कौन जान सकता है अम्बड़ भी मन ही मन खुश होकर बदला लेने की भावना से एवं मनुष्य बनने की आशा से जंगल में अदृश्य हो गया।

राजहँसी की आत्मकथा

कितनी ही बार मानव दूसरों को कष्ट में डालने के प्रयास करता है किन्तु पुण्यवानों के लिए तो वे अनिष्ठ प्रयत्न भी इष्ट हो जाते है। कवि ने ठीक ही कहा है-

करे कष्ट मा पाडवा, दुर्जन कोटी उपाय।
पुण्यवंत ने ते सवि, सुख ना साधन थाय।।

अम्बड़ क्षत्रिय के विषय में भी यही हुआ। कागी और नागी ने अम्बड़ को ज्यादा दु:खी करने के लिए जंगल में हकाल दिया था। किन्तु वह पिंजरे का पंछी मुक्ति विहारी बन गया। अब उसे जहाँ भी जाना हो वहाँ जाने के लिए स्वतंत्र था।

एक दिन की बात है।

मुर्गा रूप धारी अम्बड़ जंगल में भटक रहा था। उसे जोरों की प्यास लगी थी। पानी की खोज करते हुए वह किसी बावड़ी के पास आया। बावड़ी की सीढ़ियाँ उतरकर उसने जी भर पानी पीया।

किन्तु वही चमत्कार की तरह वह मुर्गे से इन्सान में पुन: परिवर्तित हो गया। अचानक हुए चमत्कार का कारण वह स्वयं भी न समझ सका। किन्तु उसे इतना तो अवश्य ख्याल आया कि इस बावड़ी के

जल में ऐसा कोई असाधारण प्रभाव होना चाहिए।

अम्बड़राज के आनंद की सीमा नहीं रही। अब मैं उस कागी,नागी एवं कमलकांचन योगी से वैर का प्रतिशोध लूँगा। इस तरह के विचार करते हुए वह उस जंगल में भटकने लगा।

सूर्य-अस्तांचल की ओर जल्दी-जल्दी जा रहा था। अत: अम्बड़ ने सोचा- थोडी देर में रात्रि होगी अत: मुझे किसी सुरक्षित स्थान पर जाकर रात्रि निर्गमन करनी चाहिए।

सुरक्षित स्थान की शोध में अम्बड़ आगे बढ़ा। उसने एक विशाल छायादार वृक्ष देखा। उसने सोचा इसी पेड़ पर आज रात्रि व्यतीत की जाय।

अम्बड़ पेड़ पर चढ़ गया। वह बहुत श्रमित हो चुका था। उसने सोचा रात्रि सावधानी से व्यतीत करनी होगी। यदि निद्रा आ गई तो नीचे गिर पड़ूँगा एवं हाथ पैरों की मरम्मत हो जाएँगी। तत्काल उसने अपना उत्तरीय वस्त्र निकाल कर डाली के साथ अपनी देह को कसकर बांध दी, ताकि अचानक नींद आ जाए तो भी खास कोई डर न रहे।

रात्रि गहरी रही थी। सर्वत्र अन्धकार व्याप्त था। आकाश में चन्द्रोदय होने को ही था। अचानक अम्बड़ के कर्णपट पर किसी के रुदन की आवाज आने लगी। वातावरण नीरव शांत था अत: रूदन की आवाज खूब ही स्पष्ट आ रही थी।

अम्बड़ ने अपने कान सतर्क किए। उसे लगा कि यह आवाज मृदु है अत: किसी कन्या की ही होनी चाहिए। हो सकता है। कोई बाला जंगल में किसी संकट का सामना कर रही होगी ?

अम्बड़ ने सोचा- मुझे कन्या की सहायता करने के लिए जाना चाहिए। यदि इन्सान-इन्सान के काम नहीं आता तो उसकी इन्सानियत किस काम की ?

अम्बड़ ने वृक्ष की डाली से अपनी देह को छोड़कर पेड़ से वह नीचे उतरा। शूरवीर की तरह उसने म्यान से तलवार निकाली एवं रुदन की दिशा में अन्धकार को चीरते हुए आगे बढ़ने लगा।

उसकी विचारधारा भी तीर के वेग की तरह चलने लगी। इस भयानक जंगल में सूर्य का प्रकाश भी आसानी से प्रवेश नहीं कर सकता है। वहाँ ये अत्याचारी लोग कैसे घुस जाते है ?

अम्बड़ थोड़ी ही दूर गया होगा और चन्द्र आकाश में चमकने लगा। घोर अन्धकार में चन्द्र का प्रकाश बहुत उपयोगी हो रहा था। जैसे-जैसे अम्बड़ आगे बढ़ते गया वैसे-वैसे रुदन की आवाज स्पष्ट सुनाई देने लगी।

भयानक जंगल एवं घनी झाडियों को चीरते हुए अम्बड़ जब बाहर निकला तो मैदान में एक नवयौवना रोती हुई उसे दिखाई दी। अम्बड़ उस यौवनवती के पास पहुँचा तो मूर्तिवत् जड़ हो गया।

साक्षात् अप्सरा ही हो ऐसा उसका रूप, लावण्य और सौन्दर्य था। उसके अंग-अंग से सौन्दर्य टपक रहा था।यौवन के भार से उसकी देहलता लचीली हो रही थी। सौन्दर्य सरिता के समान यह कन्या कौन होगी ? यह इस भयानक जंगल में कैसे आई होगी ? किसी दुष्ट ने इसका अपहरण किया होगा ? या फिर इसको अन्य कोई दु:ख होगा ? अम्बड़ के मन में प्रश्नों का सागर उमड़ने लगा।

थोडा स्वस्थ हो अम्बड़ ने पूछा -'हे सुन्दरी...! तू कौन है ?'

'मैं एक राजसुता हूँ।' कन्या ने रोते-रोते ही प्रत्युत्तर दिया -'हे सज्जन शिरोमणि ! आप मेरी सहायता करो।'

'तुम किस नगर की राजदुलारी हो ?अम्बड़ ने पूछा।'

'मैं रोलगपुर की राजकुमारी हूँ।' राजकुमारी बोली-'मैं विपत्ति में फँस गई हूँ क्या तुम, मुझे मदद कर सकोगे ?'

अम्बड़ ने कहा-' तू निर्भय हो जा। मेरे जीते जी तेरा कोई अनिष्ट नहीं कर सकता है। प्रथम तू मेरे प्रश्नों के उत्तर दे।'

'आप क्या पूछना चाहते है ?' राजकुमारी ने पूछा।

'क्या मैं जान सकता हूँ कि प्रभात के पुष्प की तरह विकसित इस यौवनवती देहलता का नाम क्या है ? और ऐसी नवयौवना को पुत्री को रुप में पाने का सौभाग्य पाने वाले माता-पिता कौन है ?' अम्बड़ का मन कविता करने लगा।

नवयौवना भी अम्बड़ की वाक्य रचना एवं बोलने की कला पर मुग्ध हो गई। उसने कहा-'मैं रोलगपुर के महाराजा हंसराज की प्राणप्यारी पुत्री हूँ। मेरा नाम राजहंसी है।'

'तू यदि राजकुमारी है तो फिर इस घने जंगल में क्यों आई ?' अम्बड़ ने पूछा-'क्या तेरा अपहरण करके कोई दुष्ट तुझे यहाँ लाया है या अन्य कोई कारण ?'

'सज्जन पुरूष...! पहले आप अपना नाम बताइये। फिर ही चर्चा करने में आनंद आएँगा।' राजकुमारी राजहंसी बोली।

'मेरा नाम अम्बड़ क्षत्रिय है।'

राजकुमारी बोली-'वैसे मैं यह नहीं जानती हूँ कि उसने मेरा अपहरण क्यों किया है ? किन्तु मेरा अपहरण कैसे और कब किन संयोगों में हुआ वह मैं आपको संक्षिप्त में सुनाती हूँ।'

'मेरी वय शादी के योग्य हो जाने से मेरे पिताजी महाराजा हंसराज ने मरी सगाई हरिश्चन्द्र नामक युवक राजकुमार के साथ तय कर दी। राजकुमार हरिश्चन्द्र रूपवान, गुणवान, धीर, वीर, गम्भीर था। मैं उस समय अपने भाग्य की प्रशंसा करने लगी कि दुनिया में मेरे जैसी भाग्यवती नारी अन्य कौन होगी ? किन्तु आज मुझे लग रहा है कि मैं दुनिया की सबसे अधिक दु:खी नारी हूँ।' राजहंसी फूट-फूट कर रोने लगी।

अम्बड़ ने राजकुमारी की आंखों के आसूँ पोंछने के लिए उसका स्पर्श किया। उसके रोम-रोम पुलकित हो गए। राजकुमारी के आसूँ पोछकर पूछा-'हाँ फिर क्या हुआ ?'

राजकुमारी बोली-'शादी का दिन आया। मेरे पिताजी ने सम्पूर्ण नगर को दुल्हन की तरह सजाया। घर-घर तोरण बांधे गए। सम्पूर्ण नगरजनों के अन्तर में प्रसन्नता थी। क्योंकि उनकी स्वयं की ही राजकुमारी की शादी थी।'

राजकुमारी कुछ क्षण विश्राम लेकर बोली-' मैं भी विवाह के लिए सोलह श्रृंगार सजने लगी। मैंने बहुमूल्य वस्त्र आभूषण धारण किए। जब मैं सूर्यदेव द्वारा प्रसन्नता पूर्वक प्रदत्त कंचुकी धारण कर रही थी तब अचानक न जाने कहाँ से कोई महादुष्ट ने अन्तःपुर में प्रवेश किया एवं मेरी कंचुकी छीनने का प्रयास करने लगा। किन्तु मैंने भी हिम्मत के साथ उसका प्रतिकार किया। उस दुष्टात्मा ने मेरी कंचुकी उतारने के सभी प्रकार के प्रयास किए किन्तु उसके सारे प्रयास निष्फल हो गए।'

राजकुमारी कंपित होने लगी। उसने कहा-'जब उस दुष्ट की एक न चली तब उसने क्रोधित हो मेरा अपहरण किया एवं इस जंगल में मुझे छोड दिया। एवं वह अन्यत्र चला गया। मुझे लगता है कि वह दुष्ट इसी जंगल में छुपा होना चाहिए। अतः हे नरश्रेष्ठ...,आप मेरी सहायता कर मुझे इस दुष्ट के पंजे से मुक्त कराओ।' राजकुमारी ने अपनी दुःखभरी कहानी सुनाई।

अम्बड़ ने कहा-'हे भद्रे...! मैं अपनी जान की बाजी लगाकर भी तुझे उस दुष्ट के पंजे से छुडवाऊगा। किन्तु यह तो बता कि तूने सूर्यदेव की प्रसन्नता से यह कंचुकी कैसे प्राप्त की ?'

'इसके पीछे तो बचपन का इतिहास पड़ा हुआ है ?' राजकुमारी बोली।

'यदि तुझे ऐतराज न हो तो वह इतिहास मुझे बताने का कष्ट कर।' अम्बड़ ने कहा-

राजकुमारी ने पुनः स्वस्थ होकर कहा-

'हे नरश्रेष्ठ...! मैं जब बहुत छोटी थी तब मेरे पिताजी महाराजा हंसराज ने अभ्यास हेतु सरस्वती नामक पंडिताइन के आश्रम में विद्याध्ययन करने के लिए भेजा। मेरे साथ मेरी सखियाँ भी थी। हम आठ कुलीन कन्याएँ मिलकर अध्ययन करने लगी।

समय सरिता की तरह प्रवाहित होने लगा।

जब शैशव के श्रृंगार उतारकर हमने यौवन के झूले झूलने प्रारम्भ किए। तब एक घटना ऐसी घटित हो गई जिसे हम आज तक नहीं भूल सकी।

एक दिन की बात है।

हम आठों सखियों ने निर्णय किया कि आज रात्रि आश्रम में ही निर्गमन करे। एवं पिताजी ने भी पंडिताइन पर विश्वास रखकर हमें आश्रम में रात्रि निवास की आज्ञा दे दी।

हम आठों सखियों ने रात्रि को बडी देर तक वार्ता-विनोद किया एवं मध्यरात्रि होने से पूर्व हम निद्राधीन हो गई। वैसे अभी हमें पूरी नींद नहीं आई थी। हम अर्ध जागृत ही थी की अचानक हमारे सामने कभी नहीं देखी, और सुनी परिस्थिति निर्मित हो गई।

राजकुमारी राजहंसी ने इतना कहकर अपनी आखें मूंद ली। उसके मुखारविंद पर वह भूतकाल की डरावनी रात का भय स्पष्ट देखा जा सकता था। उसके हाथ पैर कांपने लगे थे। उसके अंग-अंग में भय व्याप्त हो गया था।

'फिर क्या हुआ ?'अम्बड़ ने पूछा-

राजहंसी के साथ विवाह

राजकुमारी राजहंसी ने अपनी बचपन में बीती घटना जरा स्वस्थ होकर पुनः सुनानी प्रारम्भ की ।

जब मध्यरात्रि हो गई । तब पंडिताईन ने सोचा ये बालाएँ तो सो गई है । अतः उसने मन्त्रबल से एक मंडल का आलेखन किया । और थोडी ही देर में वहाँ एक के बाद एक योगिनियां प्रकट होने लगी । अल्प समय में चौसठ योगिनियाँ वहाँ उपस्थित होकर उस मंडल में ए्वेशी एवं रास गरबे प्रारम्भ किए ।

राजकुमारी राजहंसी बोली- 'पंडिताइन तो रास गरबे देखने में व्यस्त थी । किन्तु हम भी लेटे लेटे ही चुपचाप रास लीलाएँ देखती रही । हमें लगा आज जिन्दगी का आनंद लूट रही है हम ।'

किन्तु हमारा आनंद अधिक समय तक न टिक सका । पंडिताइन ने रास के अन्त में कहा-'आप आज तो मुझे एकाध सिद्धि देकर जाओ ।'

योगिनी बोली-'हमें सिद्धि देने में कोई आपत्ति नहीं है किन्तु सिद्धियाँ पाने के लिए कुछ विधि-विधान करने पडते है । यदि बिना विधि-विधान के सिद्धियाँ प्राप्त कर भी ली तो भी उनकी कीमत नहीं रहती है ।'

'आप जो भी विधि-विधान बताओंगी मैं उसे करने को तैयार हूँ।' पंडिताइन बोली-'मुझे क्या विधि-विधान करना पडेंगे ?'

योगिनी बोली-'यदि तुझे सिद्धियाँ चाहिए तो सबसे पहले हमें किसी बालिका की बलि चढा फिर तुझे हम एक नहीं अनेक सिद्धियाँ प्रदान करेंगी।'

'बस एक बालिका की ही बलि चाहिए तुम्हें ?' वह पंडिताइन बोली-'देखो, मेरे पास एक नहीं ये आठ-आठ कन्याएँ बलि के लिए तैयार है।' पंडिताइन ने हमारी ओर हाथ से निर्देश करते हुए योगिनियों को बताकर कहा-'मुझे कही बलि ढूंढ़ने नहीं जाना है।'

हमें देखकर योगिनियों के मुँह में पानी आ गया। और यह सुन हमें पसीना आ गया। हम आठों घबरा गई किन्तु हिम्मत से काम लेना चाहिए यह सोच आगे का वार्तालाप श्रवण करने लगी।

योगिनियों ने कहा-'इन बालिकाओं की बलि के लिए तो कृष्णपक्ष की चतुर्दशी एवं रविवार ही श्रेष्ठ है। अत: तू इन्हें रविवार की मध्यरात्रि को नैवेद्य के साथ तैयार रखना।' इतना कह कर वे योगिनियाँ अन्तर्ध्यान हो गई।

राजकुमारी राजहंसी ने अम्बड़ से पूछा-'अब आप ही बताइये कि ऐसी बात सुनकर किसे नींद आए ? क्योंकि मृत्यु के दु:ख से भयंकर अन्य कौन सा दु:ख है ? आँखों के सामने जब मौत दिखाई दे रही हो तब सुख-शांति या चैन कैसी ? और नींद कैसी ?'

'हमारी नींद तो भूत बनकर भाग गई थी। सारी रात हमने भयंकर चिंता में ही निर्गमन की। कब सवेरा हो और कब हम अपनी जान बचाकर भाग निकले इसी आशा में ही हमने रात्रि व्यतीत की।

जब सवेरा हुआ तो हमने जल्दी-जल्दी प्रात:कार्य निपटा कर पंडिताइन की स्वीकृति लेकर अपने-अपने घर चली गई।

मैंने अपने पिताजी महाराज हंसराज से कहा-'तात्...! आप जिस सरस्वती पंडिताइन पर विश्वास रखकर हमें अध्ययन करवा रहे हो वह तो

बड़ी दुष्ट है। उसने हम आठों को कृष्णचतुर्दशी, रविवार को बलि चढाने का निश्चय किया है।'

रात्रि की सारी घटना हमने पिताजी को कह सुनाई। जिसे सुन पिताजी को बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने उसी क्षण पंडिताइन को मार डालने के लिए खड्ग को कोष से खींच ली।

'किन्तु हमने पिताजी से कहा-'आप शांत हो जाइये। नाहक स्त्री हत्या के पाप का बोझ आप क्यों उठा रहे हो ?'

'किन्तु वह तुम्हें बलि के रूप में चढ़ा देगी उसका क्या ?' पिताजी ने पूछा।

'उससे बचने का उपाय हमने सोच लिया है पिताजी...।'

'वह उपाय कौनसा है ?

'उस पंडिताइन को मारने के बजाय आत्मरक्षा करना ही श्रेयस्कर है।'

'वह आत्मरक्षा कैसे की जाएगी ?'

'तात्...।' राजकुमारी बोली-'हम आठों सखियों ने सूर्यदेव की उपासना करने का निश्चय किया है। एवं सूर्यदेव के प्रसन्न होने पर उन्ही से आत्मरक्षा का उपाय पूछने का हमने निर्णय किया है।'

'यदि ऐसा ही है तो फिर देर किस बात की ?' पिताजी ने कहा-'बिना विलम्ब सूर्यदेव की उपासना करो।'

'हे नरश्रेष्ठ...।' राजकुमारी राजहंसी ने अम्बड़ से कहा-'हमने सूर्यदेव की आराधना कर उन्हें प्रसन्न किया। जब उन्होंने प्रत्यक्ष होकर हमसे पूछा-'बेटियों...,तुम्हें क्या चाहिए ?'

तब हमने कहा-'प्रभु...! पंडिताइन हमारी बलि चढ़ाना चाहती है। आप हमारा रक्षण कीजिए।'

सूर्यदेव बोले-'पंडिताइन बडी दुष्ट है किन्तु उससे ड़रने की आवश्यकता

नहीं है। मैं जो उपाय तुम्हें बताता हूँ वह तुम ध्यानपूर्वक सुनो।'

सूर्यदेव ने कहा-'रविवार को वह पंडिताइन जब तुम्हारी बली चढ़ाने के लिए पूजा-पाठ करके उस योगिनी के द्वारा प्रदत्त साड़ी पहनने के लिए खण्ड में जाए तब तुम यह कंचुकी पहन लेना।' इतना कहकर सूर्यदेव ने एक कंचुकी मुझे दी एवं मेरी सातों सखियों को एक-एक गोली देकर कहा-'जब वह बाहर आए तब तुम आठों एक साथ उसकी साड़ी खीच लेना। क्योंकि वह साड़ी ही उसका जीवन है। साड़ी खींचने के बाद तुम उसको पीट देना।' सूर्यदेव इतना कहकर अन्तर्ध्यान हो गए।

राजबाला ने अम्बड़ से कहा-'उस दिन से हमारा भय भूत बनकर भाग गया। हम प्रतिदिन अध्ययन करने के लिए आश्रम में जाने लगी।

पंडिताइन जिस दिन की राह देख रही थी वह कृष्णचतुर्दशी और रविवार का दिन आया। हम भी प्रतिदिन के अनुसार निर्भय होकर अध्ययन करने आश्रम में गई।

पंडिताइन ने हमें अपने पास बुलाकर प्रेमभरे स्वरों में कहा - 'बेटियों .. तुम पर कोई बडी विपत्ति आने वाली है ऐसा मुझे अपने ज्ञान से जान पडता है।'

'आप यह क्या बोल रही हो माताजी ?' मैंने कृत्रिमता से डरते हुए कहा।

'हॉ, बेटी.... मैं सच कह रही हूँ।'

'हे माता.!' मैंने कृत्रिम स्नेह दर्शाते हुए कहा - 'यदि संसार में हमारा श्रेय करने वाली कोई माँ हे तो वह तुम एक ही हो। यदि आप हम पर आने वाली विपत्ति जानती हो तो उसका निवारण का उपाय भी आपको पता होगा ?'

'हां.. वह उपाय भी मैं जानती हूँ।' पंडिताइन बोली - 'किन्तु क्या मेरा बताया उपाय तुम करोगी ?

'क्यों नहीं करेंगी माताजी.... ?'

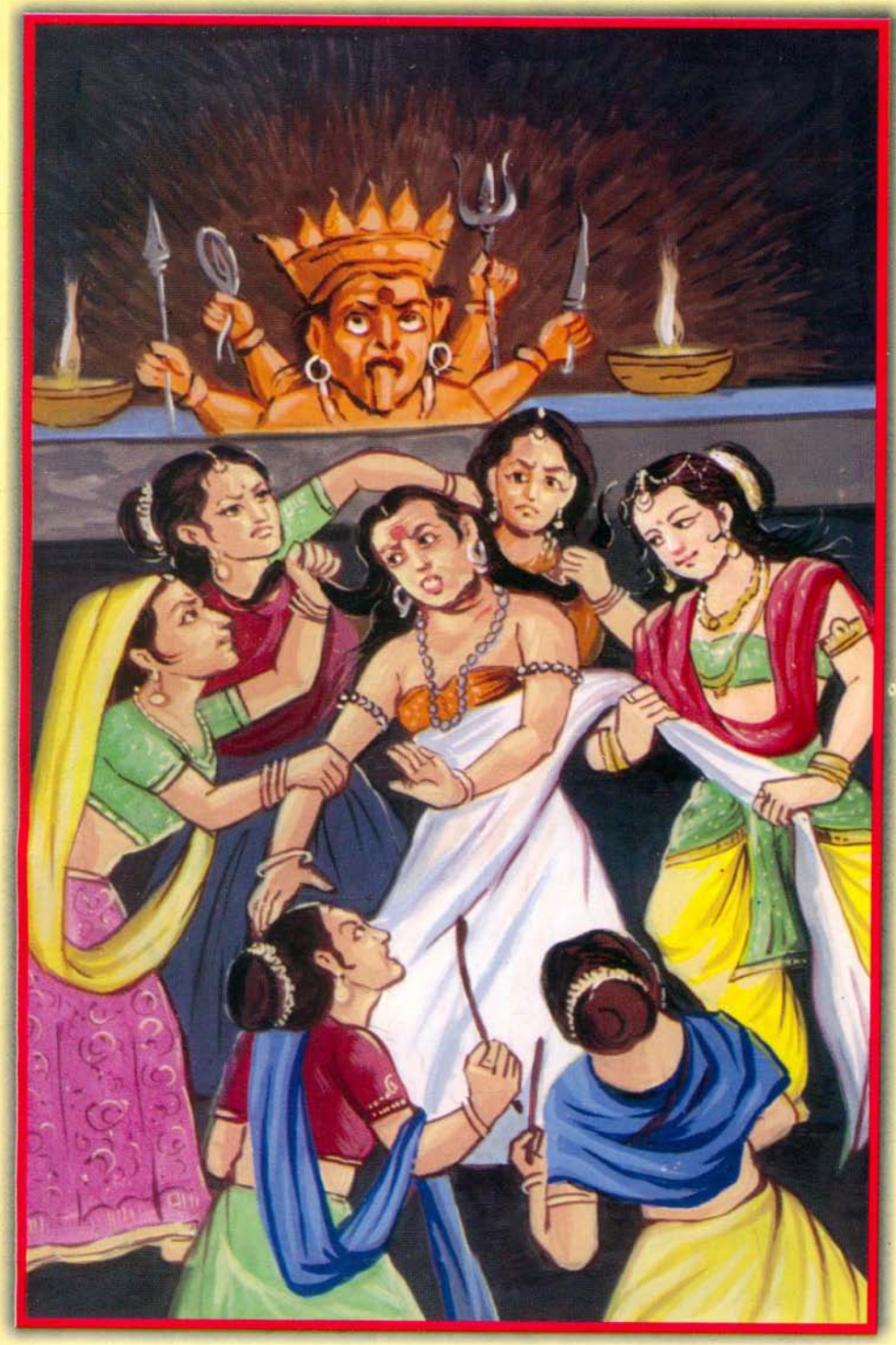

राजकुमारी राजहंसी और उसकी सातों सखियों ने पंडिताइन की साड़ी खींच ली एवं उसे पीट-पीटकर मार डाला।

सरस्वती पंडिताइन का मन आनंद से फूला नहीं समाया ।उसने धीरे से कहा - 'आज रविवार है और आज से अच्छा दिन अन्य नहीं हो सकता है। अत: आज रात्रि तुम आश्रम में ही निर्गमन करना एवं मध्यरात्रि को मैं जैसा कहू वैसा तुम करना ।'

'जैसी आपकी आज्ञा..... । मेरी एक सखी बोली - 'हम पिताजी की अनुमति लेकर यथासमय आ जाएँगी ।'

हम घर आए। मैंने पिताजी से सारी बात कही तब पिताजी ने आश्रम में सैनिको को छुपा दिया जिन्हें किसी भी स्थिति में हमारी रक्षा का दायित्व सौंपा गया था।

हम सन्ध्याँ होने से पूर्व आश्रम में आ गई । पंडिताईन ने हमें स्नान कराकर उत्तम वस्त्र पहनाए। अन्य फल नैवेद्य एवं पूजा की सामग्री तैयार की।

मध्यरात्रि होते ही पंडिताइन ने मन्त्र से मण्डल का आलेखन किया। उसमें हमें बिठाकर फल नैवेद्य से हमारी पूजा की एवं वह पंडिताइन साड़ी पहनने अन्दर के कक्ष में चली गई।

समय मिलते ही मैंने कंचुकी पहन ली एवं मेरी सखियों ने गोलिया मुँह में डाल ली एवं पंडिताइन के आने की राह देखने लगी।

जब पंडिताइन साड़ी पहनकर बाहर आई तो अचानक हमने आठों ने साहस करके उसकी साड़ी खींचना प्रारंभ कर दी।

पंडिताइन चीख पड़ी - 'यह खींचतान क्यों कर रही हो तुम ? क्या तुम्हें कुत्ते की मौत मरना है ?'

मैनें कहा - 'कुत्ते की मौत तो तुम्हें आज प्राप्त होगी। तुम्हारे पाप का घड़ा अब भर गया है।' हमने आठों ने उसकी साड़ी खींच ली। साड़ी ही उसका जीवन था। अत: अब वह विवश हो गई हम आठों ने उसे पीटना प्रारम्भ कर दिया।

हम आठ और वह अकेली। हममें खूब झुमा झटकी हुई किन्तु आखिर

हमने उसे मार मार कर अधमरा कर दिया। थोड़ी ही देर में उसके प्राण निकल गए।

सैनिक भी वहाँ दौड़ आए थे। किन्तु उन्हें कुछ भी लाभ नहीं मिला था। उसके पहले ही वह दुष्टा मरकर दुर्गति की मेहमान बन चुकी थी।

सैनिकों के साथ हम राजमहल में आ गई। पिताजी वहाँ अभी भी हमारी चिंता करते हुए जाग रहे थे। हम सुरक्षित लौट आई जानकर पिताजी ने चैन की सांस ली।

हमने सारी दास्तान पिताजी को कह सुनाई। अत: पिताजी बडे खुश हुए।

राजकन्या राजहंसी ने अपनी कंचुकी का रोमांचक इतिहास पूर्ण करते हुए कहा अंबड़ क्षत्रिय से - मुझ पर आज पुन: नई विपत्ति आ गई है उसमें आप मेरी सहायता करे।

अम्बड़ ने कहा - 'मैं जी जान लगाकर भी तुम्हारा रक्षण करूँगा तुम सारी चिंता छोड दो।'

अम्बड़ की बात सुनकर राजकुमारी को विश्वास हो गया कि यह पुरुष बेजोड पराक्रमी और प्रभावशाली है। रूप का राजा और साहस का सागर है। राजकुमारी ने कहा - 'आप मेरे रक्षक है अत: अब मेरे सर्वस्व भी बने। आज का दिन विवाह के लिए उत्तम है अत: मेरे साथ पाणिग्रहण कर ले।'

अम्बड़ तो कभी से यह चाहता था कि सौन्दर्य की सरिता में स्नान करूँ। उसने उसी क्षण गन्धर्व विधि से राजकन्या के साथ शादी की एवं इच्छित सुख भोगने लगा।

एक दिन वन में भटकते हुए उस राजहंसी ने किसी अन्जान पेड़ का फल खा लिया और अचानक वह स्त्री से गर्दभी- गधी के रूप में परिवर्तित हो गई।

अम्बड अपनी प्रिया को गर्दभी के रूप में परिवर्तित हुआ जानकर चिंता के सागर में डूब गया। उसने सोचा अब क्या किया जाए?

योगी परिवार को शिक्षा

संसार..

याने दु:खमय है ।

पापमय है । एवं असार भी है ।

संसार का प्रत्येक मानव ही नहीं बल्कि समग्र जीवसृष्टि बडी परेशान है । क्योंकि यहाँ सब परिवर्तनशील है । संसार में व्यक्ति सदाकाल न तो सुखी रहता है और न दु:खी ।

अम्बडराज की भी यही दशा है । अभी तो उसने स्वर्गलोक की अप्सरा जैसी राजकुमारी राजहंसी के साथ शादी की है । मानों स्वर्ग के सुख उसे पृथ्वी पर भोगने को मिल गए हो किन्तु फिर भी संसार सुहावना ही क्यों न हो उसे हमारे ज्ञानियो ने दु:खमय, पापमय एवं असार ही बनाया है ।

राजकुमारी राजहंसी ने किसी पेड़ के फल खा लिए और वह अचानक मानुषी से गर्दभी बन गई । क्षण भर पहले स्वर्गीय सुखों में मस्त अम्बड़ के सिर पर अचानक दु:ख, शोक के बादल उमड़ पडे । अब क्या किया जाएँ ?

किन्तु अम्बड़ निराश नहीं हुआ । वैसे भी वह साहसी एवं पराक्रमी तो था ही । अत: वह एक पेड़ के नीचे बैठ कर कुछ उपाय सोचने लगा ।

एक घटिका यूँ ही सोचने में बीत गई।

अचानक उसे वह बावड़ी याद आई जिसके चमत्कारी जल से वह स्वयं मुर्गे से मनुष्य बना था। वह उठ खड़ा हुआ एवं दौड़ते हुए उसी बावड़ी पर पहुचा। वहाँ से थोडा जल ले आया एवं अपनी प्रिया जो कि गर्दभी बन गई थी, उसे वह पानी पिलाया। और चमत्कार हुआ। गर्दभी राजहंसी के मूल स्वरूप में आ गई। अम्बड अपनी प्रिया को भेंट पडा।

राजहंसी ने कहा - 'नाथ .... मैं जीवन के अन्त तक आपके ये उपकार नहीं भूल सकूंगी। आपने दो-दो बार मेरी रक्षा की है। 'प्रिये' अम्बड ने अपने बाहु से राजहंस को मुक्त करते हुए कहा - 'मैंने कोई उपकार थोडे ही किया है। तेरे जैसी सौन्दर्य सरिता को पाकर मैं स्वयं धन्य बन गया हूँ।'

'प्राणेश....! आप महान है।' राजहंसी बोली - 'इसलिए तो मेरी प्रशंसा कर रहे है।'

'प्रिये.....! मुझे यह बताओ कि तुमने किस पेड़ के फल खाए थे ?' अम्बड़ ने पूछा।

'नाथ.....! उसका नाम भी क्यों लेते हो जिसने हमे दु:ख के सागर में धकेल दिया था।' राजहंसी डरती हुई बोली - 'मैं तो उसकी छाया भी लेने से डरती हूँ।'

'प्रिये..., तू डरती क्यों है ?' अम्बड़ ने कहा - मैं जब तक तेरे साथ हूँ तेरा कोई बाल वॉका नहीं कर सकता है। तू वह पेड़ और फल मुझे बता क्योंकि मुझे आवश्यक काम है।

राजहंसी ने अम्बड़ के आग्रह पर वह पेड़ एवं फल बताएं जिनके खाने से वह गर्दभी बन गई थी।

अम्बड़ ने उस पेड़ के फल लेकर अपने पास रख लिए। उस चमत्कारी बावड़ी का पानी भी ले आया।

राजहंसी बोली -'प्राणेश..... ! आप महान शूरवीर हो किन्तु फिर भी मुझे इस भयानक जंगल में डर लगता है अत: अब बिना विलम्ब यहाँ से रोलगपूर चल देना चाहिए ।वैसे भी वहाँ मेरे पिताजी एवं माताजी मेरे विरह में दुखमय समय व्यतीत कर रहे होंगे ।'

अम्बड़ को राजहंसी की बात योग्य लगी । तत्काल उसने आकाशवाहिनी विद्या के प्रभाव से आकाशमार्ग से रोलगपुर जाने के लिए प्रयाण किया ।

अल्प समय में वे रोलगपुर पहुँच गए। राजहंसी को अन्त:पुर में अकेली छोड़ कर अम्बड़ स्वयं नगर के बाहर उपवन में जाकर विश्राम करने लगा।

अचानक राजसुता राजहंसी को अन्त:पुर में प्रवेश करते देख राजमाता के हर्ष का पार न रहा । तत्काल महाराजा को उसने समाचार भिजवाए ।

महाराजा हंसराज भी दौडते हुए वहाँ आ पहुँचे । अपनी इकलौती बैटी को हृदय से लगाकर बोले - 'बेटी.... तू कहाँ गई थी?'

तात्....! किसी दुष्ट ने मेरा अपहरण किया था ।' राजकुमारी बोली

'तो फिर तू उस दुष्ट के पंजे से छुटकर कैसे आई ?' राजा हंसराज ने पूछा - 'तुझे किसी ने मदद की या तू स्वयं छूटकर भाग आई ?'

राजकुमारी बोली - 'मेरी ऐसी कहाँ शक्ति थी कि में छूट आती, किन्तु अम्बड़राज नामक क्षत्रिय पुत्र ने मुझे मदद की ।' राजकुमारी ने अपने साथ घटी घटना सविस्तार राजाजी को कह सुनाई । साथ ही कहा- 'यदि अम्बड़राज मुझसे नहीं मिले होते तो मैं कदापि आपके पास नहीं लौट सकी होती ।'

'बेटी..! राजा ने कहा- 'वह परोपकारी अम्बडराज कहाँ है ?'

राजकुमारी ने कहा- 'वे नगर के बाहर उद्यान में होंगे ?'

राजा हंसराज ने अम्बड़ की खोज करवाकर हाथी के हौदे पर बैठाकर नगर में प्रवेश करवाया ।

आभारवश राजा हंसराज ने अम्बड़ से कहा- 'वत्स जिंदगी भर तेरे उपकार हम नहीं भूल सकेंगे। हम तुझ पर प्रति उपकार क्या कर सकते है ?

अम्बड़ ने कहा - 'तात.... इसमें उपकार या प्रति उपकार का कोई सवाल नहीं है ।क्षमा तो मुझे आपसे माँगनी चाहिए। क्योंकि आपकी राजकुमारी के साथ आपकी अनुमति बिना ही मैंने शादी कर ली है।'

सुनकर ही राजा तो आश्चर्य चकित हो गए क्योंकि आपकी राजकुमारी ने सभी बातें बताई थी किन्तु अपनी शादी का उल्लेख उसने नहीं किया था। राजा रानी ने राजकुमारी की तरफ देखा। राजकुमारी लज्जा से अपना मस्तक झुकाकर खड़ी थी।

महाराजा हंसराज ने कहा - 'इसमें क्षमा माँगने का कोई कारण नहीं है। तुम राजकुमारी को पाने के सच्चे अधिकारी हो। क्योंकि तुमने ही इसके प्राण बचाए है। मैं आज विधिवत् राजकुमारी की शादी तुम्हारे साथ करता हूँ।'

राजा हंसराज ने उसी दिन अपनी इकलौती बेटी राजकुमारी राजहंसी की शादी की विधिवत् राज्य में घोषणा की एवं बड़े ही उत्साह और उमंग से अम्बड़ के साथ राजहंसी का विवाह किया..।

राजमहलों में रहकर अम्बड राजहंसी के साथ विविध प्रकार के संसारिक भोगों को भोगते हुए अपना समय व्यतीत करने लगा।

एक दिन महाराजा हंसराज ने सोचा - मेरी एक ही पुत्री है। अन्य कोई सन्तान तो है नहीं अत: इस राज्य को मैं क्या करूँगा? अत: यह राज्य अम्बड़ को दे देना चाहिए।

महाराजा हंसराज ने अपने मंत्रीश्वर को बुलाकर इस सम्बन्ध में विचार विनिमय किया। मन्त्रीवर का कहना था। सम्पूर्ण राज्य देकर अभी से आप निवृत्त होकर क्या करेंगे। दूसरा अम्बड़ योग्य होने के बाद भी वह

यदि यहाँ नहीं रहेगा तो क्या होगा ? अत: आपकी यदि इच्छा ही हो तो आप उसे अपना आधा राज्य दीजिए ।'

महामन्त्री का प्रस्ताव राजा को पसन्द आया । उन्होंने तत्काल निर्णय कर अम्बड़ द्वारा किए गए उपकार के बदले में अपना आधा राज्य अम्बड़ को प्रदान किया ।

इधर राजकुमारी राजहंसी के साथ विद्याभ्यास करने वाली उसकी सातों सखियों ने सोचा राजहंसी अपनी प्रिय सखी है एवं अम्बड़राज भी बडे पराक्रमी है अत: क्यों न हम अम्बड़राज की पत्नियाँ बनकर अपने जीवन को सुखमय बनाएँ ।

सातों कन्या धनवान एवं कुलवान कुल की लडकियाँ थी । उन्होंने अपना विचार अपने माता-पिता के सामने प्रस्तुत किया । उनके पिता समृद्धशाली व्यापारी थे । उन्हें भी लगा कि अम्बड़राज बड़ा ही प्रभावशाली व्यक्तित्व का धनी एवं पुण्यशाली व्यक्ति है । अत: उन्होंने उसी क्षण अपनी सातों कन्याओं की शादी अम्बड़ के साथ कर दी एवं बहुत सारा धन कन्यादान में दिया ।

अम्बड भी देवताओं की तरह अपनी आठ-आठ प्रियाओं के साथ संसार के विषय सुखों में मग्न रहने लगा । कहाँ दिन उदित होता एवं कब अस्त होता यह भी उसे पता नहीं रहता था ।

एक दिन अम्बड़ को अपने माता पिता एवं प्रिया चन्द्रावती की याद आ गई अत: उसने स्वदेश जाने की सोची । प्रिया राजहंसी से अम्बड़ ने कहा 'प्रिये मैं अभी राजसभा में जा रहा हूँ तुम अपनी सखियों के साथ समय व्यतीत करो ।'

'सभा मे जाने का प्रयोजन ?' राजहंसी ने पूछा -

'मैं महाराजा से स्वदेश गमन की अनुमति लेने जा रहा हूँ ।' अम्बड़ ने कहा - 'अब मेरा मन यहाँ नहीं लगता है ।'

राजकुमारी राजहंसी खुश हो गई। उसे भी उसके ससुराल जाने की इच्छा थी अत: उसका मन आनंद से झूम उठा।

अम्बड़ राजसभा में जा पहुँचा।

'महाराजन्.... की जय हो।'

'पधारो अम्बड़राज !' महाराज ने अम्बड़ को अवकार दिया।

'आज अचानक सभा में पधारने का प्रयोजन ?'

'मैं अचानक नहीं आया हूँ राजन ...।' अम्बड़ ने कहा - 'मैं आपकी आज्ञा लेने आया हूँ।'

'आज्ञा... ? कैसी आज्ञा ?' राजा ने आश्चर्य से पूछा

'मै स्वदेश जाना चाहता हूँ।' अम्बड़ ने कहा - 'आप मुझे अनुमति प्रदान करें।'

'अम्बड़राज...।' राजा ने कहा - तुम मुझे प्राणों से भी प्यारे हो। मन नहीं मानता कि तुम चले जाओ, किन्तु मैं समझता हूँ परदेशी एक दिन तो जाता ही है। उसे हँसते चेहरे बिदाई देनी चाहिए। तुम कब जाना चाहते हो ?'

'मै कल, ही जाना चाहता हूँ।' अम्बड़ ने कहा - 'मुझे अन्य भी आवश्यक कार्य है।'

'ठीक है मैं कल तुम्हारे प्रस्थान की सारी तैयारी के आदेश दे देता हूँ। राजा हंसराज ने कहा - 'सेना साथ आकर तुम्हें स्वदेश छोड़ आएँगी।'

दूसरे दिन प्रात: अम्बड़ ने अपनी आठों प्रियाओं के साथ आकाशगामिनी विद्या द्वारा आकाश मार्ग से प्रस्थान किया। मार्ग में वही हरिछत्र नामक द्वीप आया और अम्बड़ को अपना कार्य तथा कमल कांचन योगी याद आ गया। तत्क्षण सेना सहित अम्बड़ ने जंगल में पड़ाव डाला।

अम्बड़ के मन में वैर के प्रतिशोध की भावना जाग उठी । वह रूपपरावर्तिनी विद्या से कमलकांचन योगी का रूप बनाकर योगी के घर जा चढ़ा । अपने पति को आया जान कागी एवं नागी बाहर आई तब योगी रूप अम्बड़ ने उन्हें फल देते हुए कहा - 'यह लो, आज ये उत्तम फल एक आदिवासी दे गया है तुम इसकी सब्जी बनाओ मैं अभी आता हूँ । साथ बैठकर खाना खाएँगे ।'

अम्बड़ वहाँ से निकलकर आश्रम में कागी, नागी का रूप बनाकर योगी के पास पहुँचा और कहा - नाथ, चलिए आज नए फल की सब्जी बनाई है जिसे खाकर हम स्वर्गीय आनंद लुटें ।

कमलकांचन योगी आश्रम से घर को चल दिया । इधर अम्बड़ अपने मूल रूप में आ गया । आश्रम के एक खण्ड में उस योगी की पुत्री अन्धारिका खेल रही थी । अम्बड़ ने उसका अपहरण किया । वह रोने चिल्लाने लगी किन्तु अम्बड ने उसे थप्पड़ लगा कर चुप कर दिया ।

अन्धारिका को लेकर अम्बड़ अपनी छावनी में आया । राजहंसी को अन्धारिका देकर बोला - 'तू इसका रक्षण करना, मैं अभी आया ।'

अम्बड़ योगी के घर आया तो वहाँ लोगों की भीड मची हुई थी । कमलकंचन योगी के घर में एक गर्दभ एवं दो गर्दभी आपस में एक दूसरे को लातें मार रहे थे ।

अम्बड़ ने कहा - 'तुम्हें तुम्हारे किए का फल मिल गया है ।अब इसी तरह गर्दभ और गर्दभी के रुप में अपने जीवन को पूर्ण करना । मैं अम्बड़ हूँ एवं तुम्हारे द्वारा किए गए अपराध का फल तुम्हें चखा रहा हूँ । कमलकांचन योगी एवं कागी-नागी सोचने लगी -अब क्या होगी ?

तीसरा आदेश

अम्बड़ के आनंद का पार नहीं था। जब व्यक्ति के मन की हो जाती है तब वह अतीव आनंद सागर में सफर करते दृष्टिगोचर होता है।

कमलकांचन योगी एवं उसकी दोनों पत्नियों को अम्बड ने कपट से वे ही फल खिला दिए थे जिसे भूल से राजहंसी ने खा लिए थे और वह गर्दभि बन गई थी।

कमलकांचन योगी गधा बन गया था और उसकी पत्नियाँ गधी बन गई थी। वे आपस में दुलत्तियाँ लगा कर लड़ रहे थे। उनके घर के बाहर सैकड़ों लोग एकत्रित हो गए थे। उन्हें आश्चर्य इस बात का था कि ये योगी और इसकी पत्नियाँ गधे-गधी कैसे बन गए ?

एक व्यक्ति बोला - 'भाई .... कर्म की गति न्यारी होती है। कर्म के चंगुल से आज तक कौन बच सका है ?'

'किन्तु ये आपस में दुलत्तियों मारकर लड़ क्यों रहे है ?' दूसरे व्यक्ति ने प्रश्न किया।

तीसरा व्यक्ति बोल उठा - 'भय्या... ये मनुष्य थे तब भी इसी तरह लड़ा करते थे। अत: अब गधे बनकर लड़ते है उसमें आश्चर्य

किस बात का है ?

किसी ने कहा - 'यह ठीक ही हुआ है। आज तक इन्होंने भी लोगों को मन्त्र प्रयोग से जानवर बनाकर अपने बन्दी बनाए थे। आज इन्हें इनकी करनी का फल मिल गया है।'

लोगों की बाते सुनकर अम्बड़ ने कहा - 'हे कमलकांचन योगी ...! मैं स्वयं अम्बड़ क्षत्रिय हूँ। मैंने तुम्हें गर्दभ एवं गर्दभी बनाया है एवं तुम्हारी पुत्री अन्धारिका का अपहरण किया है। बोल अब किसी भी व्यक्ति को तु मुर्गा बनाएगा ?'

यह सुन गर्दभ शांत हो गया। उसके मुख पर स्पष्ट दयनीय भाव झलकने लगे थे। वह हताश निराश हो गया था। वह अम्बड़ के सामने देखकर दया की भीख माँगने लगा।

लोगों ने भी अम्बड़ से प्रार्थना की - 'हे नरश्रेष्ठ...! इन्हें इनके किए का फल मिल गया। अत: कृपा करके इन्हें मनुष्य बनाइए।'

उपस्थित लोगों का आग्रह अम्बड़ टाल न सका। अपने साथ लाए उस बावड़ी का पानी उन तीनों को पिलाया इससे वे पुन: अपने मानव रूप को प्राप्त हो गए। अम्बड़ के सामने नतमस्तक हो कमलकांचन योगी ने अम्बड़ से क्षमा मांगी।

इस आश्चर्य घटना को देखकर उपस्थित जनसमुदाय कहने लगा - 'शक्तिशाली पुरुष को शक्तिशाली पुरुष मिल ही जाता है। इसीलिए कहना चाहिए कि वीर अम्बड़ ने इनके अभिमान को नष्ट कर दिया। सेर के माथे सवा सेर इसी का नाम है भाई।' लोग वहाँ से अपने-अपने घर जाने लगे।

अम्बड़ क्षत्रिय भी अपनी सेना के साथ अन्धारिका को लेकर अपने

नगर में आया । सबसे पहले वह गोरख योगिनी के पास जाकर नतमस्तक हो उसने कमलकांचनयोगी की पुत्री अन्धारिका को समर्पित की।

अन्धारिका को देखकर गोरखयोगिनी ने अम्बड़ के पराक्रम की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए कहा - 'धन्य है अम्बड तुझे और तेरी माता को जिसने तेरे जैसे पराक्रमी को जन्म दिया । मै तुझ पर खूब खुश हूँ अम्बड़ क्योंकि तेरे अतिरिक्त दूसरा कौन समर्थ है कि मेरे कठिन कार्य कर सके । ठीक ही कहा है कि ऐसे शूरवीर पुरुषों के कारण ही पृथ्वी बहुरत्ना वसुन्धरा कहलाती है ।'

योगिनी द्वारा प्रशंसा प्राप्त कर अम्बड़ भी अपनी आठों प्रियाओं के साथ अपने घर आया । घर पर उसकी पहले वाली प्रिया चन्द्रावती ने उसका स्वागत किया । तब अम्बड़ ने कहा - 'प्रिये आज तेरे लिए एक काम लेकर आया हूँ ।'

आप काम किस दिन नहीं लाते हो प्राणेश....। 'चन्द्रावती बोली

अम्बड़ ने कहा - 'किन्तु आज ऐसा कार्य लाया हूँ कि जिसे देख तू चिढ़ जाएँगी ।'

तभी तो खाना पचेगा । चन्द्रावती ने कहा

अम्बड़ बोला - 'तेरे लिए तेरी आठ बहनें और ले आया हूँ ।'

आठों पत्नियों ने अपनी बड़ी सौत को प्रणाम किया । चन्द्रावती समझ गई कि अम्बड़ अन्य आठ सौतों को ले आया है वह नाखुश नहीं हुई वह ऐसी संकुचित नारी नहीं थी कि अपने पति की समृद्धि बढ़ती देख ईर्ष्या से जलने लगे। उसने अपनी आठों सौतों का भावभरा स्वागत किया ।

अम्बड़ ने रास्ते में आए संकट राजहंसी के साथ शादी अन्य श्रेष्ठिकन्याओं के साथ शादी, राज्य की प्राप्ति आदि सभी बातें सुंदर शैली में विस्तार के साथ सुनाई।

अम्बड़ अपनी नौ पत्नियों के साथ संसार के सुखों को भोगते हुए समय व्यतीत करने लगा।

एक रात्रि की बात है अम्बड़ को नींद नहीं आ रही थी। वह विचार सागर में डुबकी लगाने लगा। मैं रास्तें में रखडता भिखारी जैसा किन्तु गोरख योगिनी के दो आदेश का पालन करने से आज समृद्धि को प्राप्त हुआ हूँ।

योगिनी के आदेश मेरे लिए आशीर्वादरूप बन गए है। अत: अब मुझे भोगसुखों का त्याग कर तीसरे आदेश का पालन करना चाहिए।

अम्बड़ ने अपनी पूरी रात्रि इसी तरह के विचार में ही व्यतीत की। सबेरे थोड़ी देर उसे निद्रा आई।

प्रात:काल हो चुका था।

अम्बड़ ने जब आखें खोली तब सूर्य आकाश में तीव्र वेग से आगे बढ़ रहा था। अम्बड प्रात: कार्य निपट कर गौरख योगिनी के आश्रम की ओर चल दिया।

सूर्य रश्मियाँ धरा चुम्बन ले रही थी। पक्षीवृंद गगन को गुँजायमान कर रहे थे। हवा मन्द-मन्द बह रही थी। वातावरण खुशनुमा था।

अम्बड़ ने योगिनी के आश्रम में प्रवेश किया। योगिनी भी अपने आसन पर विराजमान थी। अम्बड़ ने योगिनी को नमस्कार कर कहा - 'हे माता .. मैंने आपके दोनों आदेश का यथार्थ पालन किया है। अब आप मुझे तीसरा आदेश करें।'

योगिनी ने कहा 'वत्स... मैं तेरा पराक्रम जान चुकी हूँ। अत: अब मेरा तीसरा आदेश सुन।'

'सिंहल द्वीप का नाम सुना ही होगा तूने ?' योगिनी बोली - 'सिंहलद्वीप की राजकुमारी चन्द्रयशा के पास रत्नमाला है। वह रत्नमाला लाकर मुझे प्रदान कर।'

'जैसी माताजी की आज्ञा।' अम्बड़ नतमस्तक हो बोला एवं अपने गन्तव्य को जाने के लिए निकल पड़ा। आकाशगामिनी विद्या के प्रभाव से अम्बड़ कुछ दिनो में सिंहल द्वीप जा पहुँचा।

सिंहल द्वीप याने सुवर्ण का टुकडा ही देख लो। द्वीप तो छोटा सा ही था किन्तु हरा भरा था। सिंहल द्वीप का वातावरण सौम्य था। अम्बड़ एक घने पेड़ की नीचे जाकर बैठ गया।

अम्बड़ ने सोचा- रमणीय द्वीप में राजमहल किस तरफ होगा ?

इतने में अम्बड़ ने देखा कि सामने से कोई नवयौवना आते हुए नजर आई। यौवन से बोझिल देहलता धारण करने वाली नवयौवना कौन होगी ? यह सोचते हुए अम्बड़ वहीं बैठा था कि नवयौवना अम्बड़ के पास से गुजरी।

नवयौवना के मस्तक पर विविध प्रकार के फल फूल से सुशोभित वृक्षों का सम्पूर्ण बगीचा देखकर अम्बड़ को आश्चर्य का पार न रहा। मानों उसने छत्र धारण किया हो।

अम्बड़ ने सोचा - यह कोमलांगी सामान्य नहीं होनी चाहिए। शायद यह सिंहल द्वीप की राजकुमारी चन्द्रयशा ही होगी। जब वह अम्बड़ के निकट से गुजरी तब अम्बड़ ने पूछा - 'हे सुलोचने...../तू कौन है ?'

अंबडराज ने राजलदेवी के सिर पर बगीचा आते हुए देखा
तो आश्चर्यचकित हो गया।

अम्बड़ का प्रश्न सुनकर ही नवयौवना के पैर वही अटक गए। उसने अम्बड़ की युवा देह पर दृष्टि डालकर सुमधुर स्वरों में उत्तर देते हुए कहा - 'मैं सिंहल द्वीप के महामन्त्री पुरोचन की प्राण प्यारी पुत्री हूँ।'

'तुम्हारा नाम ..... ?'

'मेरा नाम राजलदेवी है।'

'मैं तो आपको राजकुमारी चन्द्रयशा मान बैठा था।'

'जी नहीं, वह तो मेरी सखी है।'

'लेकिन आप भी तो अपना नाम बताइये।' राजलदेवी ने पूछा

मेरा नाम अम्बड़ क्षत्रिय है। अम्बड़ ने कहा - 'यदि आपको कोई आपत्ति न हो तो मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ।'

'एक क्या अनेक प्रश्न पूछ सकते हो अम्बड़राज....। अम्बड़ के रूप पर मोहित हो रही राजलदेवी बोली- मैं यथा शक्य प्रत्युत्तर देने का प्रयास करूँगी।'

अम्बड़ ने पूछा- आपके मस्तक पर छत्र की तरह चलने वाला यह बगीचा कैसा है ?

अम्बड़ के रूप पर मुग्ध बनी नवयौवना ने कहा -'इसके पीछे लम्बा इतिहास पड़ा हुआ है। यदि आपको समय हो तो मैं सुनाती हूँ।'

'मुझे यहाँ कोई काम नहीं है।' अम्बड़ ने कहा - 'तुम्हारी बात सुनने से मेरी जिज्ञासा शांत होगी।'

'तो तुम सावधान होकर सुनिए।'

प्रेमी पंखी

एक दिन की बात है।

राजकुमारी चन्द्रयशा और राजलदेवी याने मैं स्वयं उपवन में घूमने के लिए निकली थी। यत्र तत्र घूमकर वे किसी सरोवर के किनारे पर जाकर विश्रान्ति ले रही थी उन्होंने अपनी तरफ किसी वृद्धा को आते हुए देखा।

वृद्धा को देखकर वैसे दोनों डर चुकी थी किन्तु भागने का कोई अर्थ नहीं था। वृद्धा निकट आई। उसने स्वयं ने हमसे प्रश्न किया - 'पुत्रियों .. ! तुम एकाकी कहाँ जा रही हो ?'

'हम आपके दर्शन को ही आ रही थी माताजी ... ।' राजकुमारी ने समय पहचान कर प्रत्युत्तर दिया।

प्रसन्न होकर वृद्धा ने कहा - 'यदि तुम मेरे साथ आने में संकोच न करती हो तो मैं तुम्हें ईश्वर के दर्शन करा सकती हूँ।'

'वह ईश्वर कौन है माताजी ?' चन्द्रयशा ने पूछा

'जनता जनार्दन उसे शंकरजी के नाम से जानती है।' वृद्धा ने प्रत्युत्तर में कहा - 'वैसे महादेवजी और भोले नाथ के नाम से भी वे पुकारे जाते है।'

शंकरजी रहते कहाँ है ? राजलदेवी ने पूछा- यदि स्थान का पता हो तो हमें आने में कोई संकोच नहीं होगा।

वृद्धा ने कहा - 'शंकरजी का निवास कैलाश पर्वत पर है। वे पार्वती के साथ वही निवास करते है।'

'किंतु कैलाश पर्वत पर कैसे जाया जा सकता है' राजकुमारी चन्द्रयशा ने चिंतातुर होकर पूछा।

'यह चिंता तुम्हें करने की आवश्यकता नही है।' वृद्धा ने कहा - 'मैं अपनी दिव्यशक्ति से तुम्हें कैलाश पर्वत पर ले जाऊँगी।'

हमारी खुशी का पार न रहा। यदि ईश्वर के दर्शन होते हो तो इससे भला और क्या हो सकता है ? हमने स्वीकृति दे दी और बस मानों चमत्कार ही हुआ हो। थोड़ी ही देर में हमने अपने आपको कैलाश पर्वत पर देखा। सामने ही शंकरजी का निवास स्थान था।

वृद्धा हमें शंकरजी के पास ले गई। हमने शंकरजी को नतमस्तक हो नमस्कार किया। शंकरजी ने वृद्धा से पूछा - 'ये बालाएँ कौन है ? और यहाँ आने का प्रयोजन क्या है ?'

वृद्धा ने कहा - 'सिंहल द्वीप की राजकुमारी चन्द्रयशा है और यह इसकी सखी राजलदेवी है जो कि महामन्त्री पुरोचन की पुत्री है। ये दोनों सखियाँ मात्र आपके दर्शन के उद्देश्य से ही आई है।'

प्रसन्न हो शिवजी ने हमें भेंट देने के लिए हाथ बढ़ाया। उन्होंने राजकुमारी चन्द्रयशा को अदभुत रत्नमाला प्रदान की एवं मुझे कुर्मदण्ड दिया।

राजकुमारी चन्द्रयशा ने कहा - 'ये हमारे किस काम आएँगी देव।'

शंकरजी बोले - 'यह रत्नमाला जो भी पहनेगा वह आसानी से अपना रूप बदल सकता है तथा कुर्मदण्ड से शत्रुओं का नाश किया जा सकता है।'

यह सुन अम्बड़ क्षत्रिय ने सोचा अच्छा योगिनी द्वारा मंगवाई गई रत्नमाला की यह कहानी और प्रभाव है। किन्तु उसने पुनः पूछा - 'हाँ

फिर क्या हुआ।'

राजलदेवी ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा - 'हमें इनका क्या प्रयोजन है ? हमें तो रोज आपके दर्शन हो जाने चाहिए।'

शंकरजी इससे अधिक खुश हो गए। उन्होंने कहा 'तुम्हारे राजमहल के पीछे त्रिदण्ड नामक पेड़ है। उस पर चढकर इस कुर्मदण्ड से प्रहार करने से वह आकाश मार्ग से तुम्हें प्रतिदिन कैलाश पर्वत पर ले आएगा।'

हमारे आनंद का पार न रहा। वृद्धा ने हमें अपने घर लाकर छोड़ दिया। राजकुमारी ने अपने पिताजी महाराजा सोमचंद्र एवं महारानी चन्द्रावती को रत्नमाला देकर सारी बात कह सुनाई।

राजा भी प्रसन्न हो गए। उन्होंने वह चमत्कारिक रत्नमाला अपने खजाने में सुरक्षित रखवाकर उस पर सशस्त्र पहरेदार लगा दिए है।

उस दिन से मैं और मेरी सखी चन्द्रयशा प्रतिदिन त्रिदण्ड वृक्ष पर सवार होकर शंकरजी के दर्शन को जाने लगी । एवं लौटकर आने पर पेड़ आंगन में रोप देती थी।

'लेकिन मेरी बात का उत्तर इसमें कहाँ आया ?' अम्बड़ ने बीच में ही पूछ लिया- 'तुम्हारे सिर पर यह उद्यान कैसे चलता है ?'

'बस अब यही बताने जा रही हूँ।' राजलदेवी ने कहा -'प्रतिदिन की तरह मैं सखी राजकुमारी चन्द्रयशा के साथ त्रिदण्ड वृक्ष पर सवार होकर कैलाश पर्वत की तरफ जा रही थी। उस दिन हमें देरी हो जाने से सूर्यदेव अपनी सवारी लेकर आकाश में आ चुके थे। उन्होंने हमें आकाश मार्ग से जाते हुए देखा तो उन्हें शंका हो गई - यह कोई महाशक्ति है एवं मुझे ग्रसने आ रही है। किन्तु उनकी शंका अधिक समय न टिक सकी।'

'हम जब सूर्यदेव के निकट से गुजरी तब सूर्यदेव ने हमसे पूछा - पुत्रियों तुम कहाँ जा रही हो ?'

राजकुमारी बोली - 'हम प्रतिदिन कैलाश पर्वत पर शंकरजी के दर्शन को जाती है ।'

हमारी बात श्रवण कर सूर्यदेव प्रसन्न हो गए । उन्होंने सोचा इतनी छोटी सी उम्र में ये बालाएँ प्रभु भक्ति में कितनी सजाग है । उन्होंने कहा - 'पुत्रियों मैं तुम पर प्रसन्न हूँ तुम दोनों एक एक वरदान मांग लो ।'

हमें तो कुछ मांगना ही नहीं था अत: मैंने कहा - 'हमें तो मात्र आपकी कृपा चाहिए तथा प्रभु भक्ति में किसी प्रकार का विध्न न हो ऐसा आशीर्वाद चाहिए ।'

सूर्य देव ने अतीव प्रसन्न हो राजकुमारी को तिलका भरण दिया एवं मेरे मस्तक पर छत्र की तरह रहे ऐसा उद्यान प्रदान किया ।

राजलदेवी ने अम्बड़ से कहा- 'तभी से यह बगीचा मेरे सिर पर हमेशा के लिए छत्र की तरह रहता है । हम इसी बगीचें के पुष्पों से सदा शंकरजी की पूजा करते है ।'

राजलदेवी के मुख से आश्चर्यजनक घटना श्रवण कर अम्बड़ ने नगर में प्रवेश किया । राजलदेवी अम्बड़ के रूप पर मुग्ध हो गई थी । वह मन ही मन सोचने लगी यदि यह युवा मेरा पति बन जाए तो कितना अच्छा ।

राजलदेवी भी पुष्प के पीछे भंवर की तरह अम्बड़ के पीछे-पीछे नगर में चली । उसे समय का पता न रहा कि वह कहाँ और क्यों जा रही है ।

अम्बड़ ने भी नट का रूप बनाकर नगर के मध्य में विद्या से नटकन्याएँ बनाकर भव्यातिभव्य नाटारम्भ प्रारम्भ किया । राजलदेवी भी उस नृत्य में भाग लेने लगी ।

संगीत की मधुर धुनों में मस्त होकर हजारों नगरजन वहाँ एकत्रित होने लगे । राजकुमारी चन्द्रयशा तथा महामन्त्री पुरोचन भी वहाँ आएँ । वे नटराज के साथ राजलदेवी को नृत्य करते हुए देखकर प्रशंसा में मस्त

होकर कहने लगे - 'वास्तव में नृत्य भी एक कला है ऐसी नृत्यकला तो सिर्फ देव या विद्याधर के पास ही होती है।'

इधर महामन्त्री पुरोचन ने राजा से फरियाद की - 'राजन्... । किसी धूर्त ने मेरी पुत्री को ठग ली है अत: उस नृत्यकार के साथ वह भी नृत्य कर रही है आप उसे छुड़वाइये।'

राजा भी मन्त्री की बात श्रवण कर वहाँ आया तब अम्बड़रूप धारी नृत्यकार ने ब्रह्मा,विष्णु, महेश आदि के रूप बनाकर लोगों के मन जीत लिए।

राजा सोमचन्द्र नृत्य की समाप्ति पर नटराज को सुवर्ण आभूषण भेंट देने लगा। इसके साथ हजारों नगरजन भी छोटी मोटी भेंट देने लगे किन्तु नटराज ने किसी की भी भेंट नहीं स्वीकारी।

सभी लोग यही बोलते हुए बिखरने लगे - 'यह कोई विद्याधर या देवकुमार होगा।'

राजलदेवी भी अम्बड़ की अनुमति लेकर अपने घर गई तब मन्त्री पुरोचन ने उसे सख्त शब्दों में डाटते हुए कहा - तूने यह क्या किया ? हमारे कुल को कलंक लगाने वाली कन्या को धिक्कार है।'

राजलदेवी ने सोचा - घर के बड़े लोगों का तिरस्कार और कटु वचन सहन करने चाहिए। यह नीतिकारों का कथन है यह समझकर उसने मौन का आश्रय लिया।

सन्ध्या को राजलदेवी जब अपनी प्रिय सखी चन्द्रयशा से मिलने गई। चन्द्रयशा का पहला प्रश्न था - 'जिसके साथ तू नृत्य कर रही थी वह कलाकर कौन था ?'

यह तो मैं नहीं जानती। राजलदेवी बोली - 'कोई परदेशी है। नाम से अम्बड़ कुमार के रूप में मेरी मुलाकात हुई थी'

राजलदेवी ने प्रश्न किया 'कैसा था वह राजकुमार .. ?

'धीर और वीर... ।' राजकुमारी बोली ।

'क्या तू उसे चाहती है ?' राजलदेवी ने पूछा-'मैंने तो उसे अपने स्वप्नों का राजकुमार माना है ।'

'जो तेरे स्वप्नों का राजकुमार वह मेरे भी स्वप्नों का राजकुमार है ।' राजकुमारी चन्द्रयशा बोली- 'मैंने जब से उसे देखा है तभी से मेरा मन उसने मोह लिया है । तू और मैं सखी ही है अब जीवन भर एक पति की पत्नी बनकर रहेंगे।'

'तेरा विचार उत्तम है ।' राजलदेवी बोली - 'समय आने पर हम हमारे विचारों को आचार में परिवर्तित करेंगे ।'

राजकुमारी ने कहा - 'क्या आज रात्रि को उस कलाकार को तुम मेरे अन्त:पुर में भेजने की कृपा करेंगी ?'

'क्यों नहीं , अवश्य भेज दूँगी । राजलदेवी बोली और वहाँ से रवाना हो गई । अपने घर जाते समय रास्तें में अम्बड़ के पास जाकर बोली - 'प्रिय मैं अभी राजकन्या से मिलकर आई हूँ । वह आपको हृदय से चाहती है । उसने आज रात्रि को अन्त:पुर में पधारने का आमन्त्रण मेरे साथ भेजा है । हॉ जाते समय यह ख्याल रखें कि वह सुवर्णमय झरोखें वाले महल में निवास करती है ।' राजलदेवी अपने घर चली गई ।

रात्रि का एक प्रहर बीत चुका था ।

अम्बड़ का मन भी राजकुमारी को मिलने के लिए तड़पने लगा था । वह अपने स्थान से निकलकर अंधकार को चीरते हुए राजमहल के निकट पहुँचा । आकाशगामिनी विद्या से उसने सुवर्ण मय झरोखे में प्रवेश किया । वहाँ राजकुमारी चन्द्रयशा उसकी राह देखकर ही बैठी थी । अपने स्वप्न के राजकुमार को आया देख वह मदमस्त बन गई । दोनों आपस में एक

दूसरे को आलिंगन करने लगे। एक दूसरे का मन जीतते दोनों ने अपनी अपनी कामनापूर्ण की।

बड़ी देर तक दोनों प्रेमी पंखियों ने प्रेमालाप किया। जब बिदा होने का समय आया तब अम्बड़ ने अपने साथ लाया पान अपने हाथ से चन्द्रयशा को खिलाया। प्रेम में पागल बनी राजकुमारी ने भी अपने प्रेमी के हाथ से पान खा लिया। अम्बड़ ने उस पान में उस विचित्र पेड़ के फल का चूर्ण रख दिया था।

अम्बड़ राजकन्या को वहीं छोड़कर झरोखे के मार्ग से निकल कर अपने स्थान पर चला गया। राजकुमारी भी प्रेमी के विरह में तड़पती पलंग पर कुछ समय पहले के मधुर स्मरणों को याद करती हुई निद्रित हो गई।

प्रात: जब परिचरिका राजकुमारी के अन्त:पुर में आई तब राजकुमारी का पलंग खाली पड़ा था तथा कक्ष में एक गर्दभी घूम रही थी। यह दृश्य देख परिचारिका घबरा गई और दौड़कर महाराजा सोमचंद्र को समाचार दिए - 'राजन् अन्त:पुर में राजकन्या चन्द्रयशा नहीं है तथा शयन कक्ष में एक गर्दभी घूम रही है।'

'हे.... ? क्या कहा ?' सोमचन्द्र राजा विस्मय से बोल पड़े। 'राजकुमारी अन्त:पुर में नही है। और एक गर्दभी वहाँ घूम रही है ? किन्तु अन्त:पुर में गर्दभी आई कहाँ से ?'

सभी आश्चर्यचकित हो सोचने लगे।

राजकुमारी अमरावती

ढीम धड़ाधड़ .. ढीम.... धड़ाधड़ ढीम..... ।

'सुनो.... सुनो.... नगरजनों सुनो.... । जो कोई सिद्ध पुरुष राजकुमारी चन्द्रयशा को मनुष्य बना देगा उसे राजा अपना आधा राज्य दे देगें एवं राजकन्या से उसकी शादी कर देंगे ।'

ढीम धड़ाधड़.. ढीम धड़ाधड़... ढीम.... । राजा सोमचन्द्र के राजपुरुष नगर में उद्घोषणा करवा रहे थे । चौराहे पर उद्घोषणा सुनने सैकड़ों लोग एकत्रित हो गए थे ।

वैसे सम्पूर्ण नगर में चर्चा का विषय बन गया था कि राजकुमारी चन्द्रयशा अचानक गर्दभी बन गई है । इससे राजा तथा प्रजा दोनों शोकाकुल हो गए थे । राजा रानी के तो सुख चैन ही हराम हो गए थे । न तो उन्हें खाना भाता था न उन्हें निद्रा आती थी अत: उन्होनें यह उद्घोषणा करवाई थी ।

राजा की उद्घोषणा श्रवण कर वहाँ राज्य तथा राजकुमारी के लालच से मान्त्रिक तान्त्रिक बाबा जोगी पीर फकीर आने लगे एवं राजकुमारी को मनुष्य बनाने के लिए विविध उपाय आजमाने लगे किन्तु सभी निष्फल हो गए ।

महाराजा सोमचन्द्र हताश एवं निराश होने लगे थे किन्तु अचानक राजसभा में एक दिन अम्बड़ क्षत्रिय आया उसने राजा को प्रणामकर कहा

- 'राजन... । आपकी राजकुमारी को मैं मात्र तीन दिन में पुनः मनुष्य बना दूँगा ।'

महाराजा सोमचन्द्र को अम्बड़ की बात पर विश्वास नहीं हुआ । ऐसे आश्वासन तो बहुत से लोग राजा को दे रहे थे । फिर भी राजा ने कहा - 'तुम अपने उपचार कीजिए, यदि सफल हो गए तो आधा राज्य एवं राजकुमारी के साथ शादी की जाएगी ।'

अम्बड़ ने राजकुमारी के शयनकक्ष में जाकर तीन दिन विविध पूजा पाठ तथा मन्त्र प्रयोग किए क्योंकि - राजसभा में , व्यवहार में, शत्रुओ के बीच, तथा स्त्रियों के समक्ष आडम्बर किया जाना चाहिए ।

चौथे दिन अम्बड़ ने अपने साथ लाए जल को पिलाकर राजकुमारी को मूल स्वरूप में लाकर राजा के समक्ष प्रस्तुत की । जिसे देख राजा तथा प्रजा बोल उठी- 'यह कोई सामान्य इन्सान नहीं है बल्कि विद्याधर या देवकुमार है ।'

महाराजा सोमचन्द्र ने अपनी घोषणा के अनुसार अम्बड़ के साथ राजकुमारी चन्द्रयशा की शादी करके रत्नमाला सहित आधा राज्य प्रदान किया । महामन्त्री ने भी अपनी पुत्री की इच्छा जानकर अम्बड़ के साथ राजलदेवी का भी विवाह कर दिया ।

अम्बड़ क्षत्रिय ने राजकुमारी चन्द्रयशा एवं मन्त्रीपुत्री राजलदेवी के साथ संसार के सुखों को भोगते हुए थोड़ा समय सिंहलद्वीप में ही बिताया ।

एक दिन अम्बड़ अपनी प्रियाओं के साथ बहुमूल्य रत्नादि सामग्री लेकर अपने नगर रथनुपुर आया । सर्वप्रथम वह अपनी दोनों प्रियाओं के साथ रत्नमाला लेकर गौरख योगिनी के पास पहुँचा ।

योगिनी को प्रणामकर रत्नमाला उसके चरणों में समर्पित की । योगिनी ने भी उसे धन्यवाद दिया ।

तत्पश्चात अम्बड़ क्षत्रिय अपनी प्रियाओं के साथ राज्य सुखो को भोगते हुए समय निर्गमन करने लगा ।

एक दिन की बात है

अम्बड़ योगिनी के पास ही बैठा था कि गोरखयोगिनी ने अम्बड़ को अपना चौथा आदेश सुनाया।

नवलक्ष नामक नगर में एक समुद्री व्यापारी रहता है उसके यहाँ लक्ष्मी का पार नहीं है। उसकी पुत्री रूपिणी के पास एक बन्दरियाँ है। उस बन्दरियाँ को लाकर मुझे दे।

और अम्बड़ भी अपनी आकाश गामिनी विद्या से आकाशमार्ग द्वारा नवलक्षनगर जाने को निकला। रास्ते में सुगन्धवन नामक अटवी आई। अटवी का वातावरण खूब ही सौम्य था। विविध प्रकार के फल फूलों के पेड़ एवं हरियाली से सुशोभित उस वन ने अम्बड़ का मन मोह लिया। थोड़ी देर वन की शोभा देखने के लिए अम्बड़ नीचे उत्तरकर एक पेड़ के नीचे बैठा।

अचानक अम्बड़ ने देखा कि स्वयं वनदेवी ही मानों रास्ता भूल गई न हो इस प्रकार कोई नवयौवना वहाँ से व्यतीत हुई। नवयौवना ने अम्बड़ पर एक दृष्टि डाली और अम्बड़ ने भी नवयौवना को एक टकी नजरों से देखा।

बिजली के चमत्कार की तरह वह नवयौवना वहाँ से चली गई। अम्बड़ भी उस नवयौवना के रूप पर मोहित होकर उसके पीछे पीछे चला। सौन्दर्य एवं लावण्य के भार में मदमस्त नवयौवना को देखकर ही मानों उसकी आखें चौधियाँ गई थी।

क्षणार्ध वह उसके पीछे चला होगा कि अचानक वह नवयौवना वन में ओझल हो गई।

अम्बड़ क्षत्रिय ने नवयौवना को ढूंढने के लिए वन का चप्पा-चप्पा छान डाला किन्तु वह बाला उसे न मिली। अत: हताश हो वह एक पेड़ के नीचे आराम करने लगा।

इतने में एक बटुक वहाँ प्रकट हुआ। जिसे देख अम्बड़ के मन में शंका

कुशंकाएँ होने लगी। इतने में उस बटुक ने कहा - 'क्या आप मेरे साथ चलेंगे ?'

'कहाँ ?'

'मेरी स्वामिनी के पास... ।'

'आपकी स्वामिनी कौन है ?'

'वन श्री ही समझ लो।' बटुक ने कहा - 'नाम तो उनका अमरावती है किन्तु उनका रूप एवं लावण्य साधु-सन्तों के मन को भी चलायमान करने के लिए समर्थ है।'

अम्बड़ के लिए यह नाम अपरिचित था। अत: वह निर्णय नहीं कर पाया कि वह अमरावती कौन है ? कहाँ रहती है ? अत: उसने बटुक से पूछा - 'यह अमरावती कौन है ?'

बागवान बटुक बोला - 'बात जरा लम्बी है। यदि आपको समय हो तो मैं सुना देता हूँ।'

अम्बड़ बोला - 'तुम सुनाओ यह अमरावती कौन है।'

बटुक ने अमरावती का इतिहास कहना प्रारम्भ किया।

अग्निकुण्ड नाम के नगर में दैवादित्य नाम का राजा राज्य करता था। वैसे राजा को सैकड़ों रानियाँ एवं कई पुत्र तथा पुत्रियाँ थी। उसमें लीलावती नामक रानी को पट्टरानी बना रखी थी।

एक दिन राजा दैवादित्य को उनकी रानी रूपमती ने भोजन के लिए अपने महल पर बुलाया। राजा भी रानी रूपमती के महल पर भोजन करने गया।

भोजन करने के पश्चात् राजा तत्काल तोता बन गया। इससे मन्त्री सेनापति नगरजन सभी चिंतित हो गए। क्योंकि राजा न्यायी तथा प्रजापालक था।

राजा के तोते बन जाने के पीछे रानी रूपमती का ही हाथ है यह मानकर नगरजनों ने रानी रूपमती को राजमहल से तिरस्कार कर निकाल दी।

पट्टरानी लीलावती तोते रूपी राजा का बडे प्रेमपूर्वक पालन पोषण करने लगी।

एक दिन राजा जो कि तोता बन गए थे ने आत्महत्या कर अपने जीवन का अन्त करने की सोची। किन्तु अचानक वहाँ आकाश मार्ग से किसी सिद्ध पुरूष का आगमन हुआ।

सिद्धपुरुष ने राजा को पुनः मनुष्य बना दिया। इससे पूरा राजपरिवार तथा नगरजन खुशी से झूम उठे किन्तु राजा के मुख पर उदासीनता ही थी।

पट्टरानी लीलावती ने राजा से उदासीनता कारण पूछा तो राजा ने कहा- प्रिये संसार में कर्म की गति खूब ही विचित्र है। मैं अब संसार में रहना नहीं चाहता। मैं संन्यास लेकर अपना आत्मकल्याण करने की भावना वाला बना हूँ। मुझे तुम लोग अनुमति दो।

रानी बोली - 'यदि आप संन्यास ग्रहण करोंगे तो क्या मैं संसार में रहूँगी ? मैं भी आपके साथ संन्यास ग्रहण करूँगी।'

राजा प्रसन्न हो गए। उन्होंने अपने पुत्र को राज्य प्रदान कर रानी लीलावती के साथ संन्यास ग्रहण कर लिया एवं वन में एक आश्रम बनाकर साधना करने लगे।

एक दिन राजर्षि ने तापसी लीलावती को सगर्भा देखी। उन्होंने कहा - तुमने यह क्या किया ?

तापसी बोली - 'मैंने व्रत में किसी तरह का दोष नहीं लगाया है। यह तो मैं पहले से ही गर्भवती थी किन्तु व्रत में विलम्ब न हो इसलिए मैंने आपको बताया नहीं था।'

राजर्षि को इस बात से सन्तोष हो गया। वे पुनः अपनी साधना में मग्न हो गए।

समय पूर्ण होने पर रानी तापसी ने एक अप्सरा के समान रूप वाली कन्या को जन्म दिया किन्तु वह अपनी प्राणप्यारी का मुँह न देख सकी। प्रसूती की तीव्र पीड़ा के कारण वह उसी क्षण मरण के शरण हो गई।

इतना कहकर बटुक साँस लेने को क्षणार्ध रूका तब अम्बड ने पूछा - 'हाँ... । फिर क्या हुआ ?'

राजर्षि स्वयं उस कन्या का लालन पालन करने लगे। धीरे धीरे कन्या ने युवावस्था में प्रवेश किया। राजर्षि ने साथ में रहकर कन्या को अनेक प्रकार की कलाएँ सिखाई।

प्रकृति की गोद में रहकर पलने के कारण राजकुमारी भी इतनी सौन्दर्यवती हो गई कि उसे देख अच्छे - अच्छे लोगों का हृदय पिघल जाए।

राजर्षि ने अपनी बाला का नाम अमरावती रखा है। बटुक ने कहा - 'अब आगे क्या हुआ यह भी मैं आपको सुना देता हूँ।'

एक दिन की बात है ।

अमरावती अपने आश्रम के बाहर हिरणों के साथ खेल रही थी तभी आकाश मार्ग से जाते हुए धनद नाम के विद्याधर ने उसे देखी। देखता ही रहा , जी भरकर अमरावती के रूप सौन्दर्य का पान किया।

वास्तव में वह सौन्दर्य की सरिता थी।

प्रेम की प्रतिमा थी।

कोमलता की कविता थी।

विद्याधर नीचे आया उसने राजकुमारी अमरावती को खुश करने के लिए तीन चमत्कारी रत्न दिए।

अमरावती ने पूछा- 'इन रत्नों का क्या प्रभाव है ?'

धनद ने कहा - ये रत्न अचिन्त्य प्रभावशाली है। तू ध्यानपूर्वक इनकाप्रभाव सुन..... ।

अज विद्या एवं रुपिणी

राजकुमारी अमरावती के साथ पणिग्रहण करने की इच्छा वाले विद्याधर धनद ने अमरावती को तीनों रत्नों का प्रभाव बताते हुए कहा - 'पहला रत्न जल के उपद्रव का नाश करता है। दूसरे रत्न के प्रभाव से अग्नि शांत हो जाती है एवं तीसरे रत्न के प्रभाव से भूत प्रेत आदि उपद्रव का नाश होता है।'

अमरावती ने प्रसन्न हो तीनों रत्न ग्रहण करते हुए कहा - 'हे भाई ..! तुम्हारे द्वारा प्रदत्त ये तीनों रत्न मैं ग्रहण करती हूँ। वैसे भी मैंने अपने भाई का स्नेह नहीं पाया है। अत: तुम्हें भाई बनाकर मैं तुम्हारा स्नेह चाहती हूँ।'

भाई के सम्बोधन से धनद का कामराग शान्त हो गया। उसने भी अपनी बहन मानकर अमरावती को प्यार किया।

अपनी बहन को रहने के लिए धनद ने एक विशाल सरोवर बनाकर माणिक मोती के तोरण वाला एक विशाल सुविधाओं से युक्त महल सरोवर के मध्य में बना दिया।

अमरावती भी सरोवर के मध्य स्थित महल में रहकर आनंद प्रमोद में समय व्यतीत करने लगी।

अमरावती को सुख सुविधा में रहते देख राजर्षि भी प्रसन्न रहने लगे

किन्तु उनका मन हमेशा एक चिंता में डूबा रहता। अत: उन्होंने एक बार विद्याधर धनद से पूछा -

'क्या तुम बता सकते हो कि अमरावती का भर्तार कौन होगा ?'

विद्याधर ने अपनी विद्यादेवी से पूछ कर कहा - 'हाँ मैं बताता हूँ आपको कि इस पृथ्वी पर महापराक्रमी अम्बड़ नामक नरपति अमरावती का पति होगा।'

'किन्तु नरपति अम्बड़राज हमें कहाँ मिलेंगे ?' राजर्षि ने चिंतित स्वरों में कहा

विद्याधर बोला - 'आज से सातवें दिन इसी वन में अम्बड़ आएगा और वह अमरावती का स्वामी बनेगा।'

उसकी कुछ पहचान भी आप बताइये।

विद्याधर बोला - 'बकुल वृक्ष के नीचे आज से सातवें दिन बैठे हुए पुरुष को तुम अम्बड़ मान लेना।'

इतना कहकर बटुक बागवान ने कहा - 'आज सातवाँ दिन है और आप बकुलवृक्ष के नीचे बैठे है अत: हम मान रहें है कि अम्बड़ नरपति आप स्वयं ही होंगे ?' बटुक ने प्रश्नभरी दृष्टि से अम्बड़ के सामने देखा।

तुम्हारा अनुमान सच है बटुक...! अम्बड़ ने कहा

तो तुम मेरी स्वामिनी के पास चलिए वह आपकी राह देख रही होगी। बटुक बोला

अम्बड़ उसके साथ चल दिया। थोड़ी देर में वे उस सरोवर के किनारे आए जहाँ वह अमरावती निवास करती थी।अम्बड़ बटुक के साथ तैरते हुए अमरावती के महल पर पहुँचा जहाँ अमरावती ने उसका भावभरा स्वागत किया।

अमरावती को देखकर ही अम्बड़ समझ गया कुछ समय पहले देखी

वनदेवी यह स्वयं अमरावती ही है। और भाग्य की क्या बलिहारी है।

अमरावती और अम्बड़....

दोनों आपस में खो गए। 'उफ... मैं तेरे पिता राजर्षि के समाचार लेना तो भूल ही गया। राजर्षि कहाँ है ?'

'वे तो सरोवरों के बाहर आश्रम में निवास करते हैं।' अमरावती बोली- मैं उन्हें यहाँ बुला लेती हूँ ।

अम्बड़ ने कहा- 'नहीं प्रिये.... राजर्षि को कष्ट देने से तो अच्छा यही होगा कि मैं स्वयं उनके समाचार लेकर आता हूँ।'

अमरावती ने बहुत मना किया किन्तु अम्बड़ न माना। वह बटुक के साथ सरोवर में तैरते हुए किनारे की और जा रहा था आगे बटुक था और पीछे अम्बड़ ।

अचानक एक बड़ा मत्स्य दौड़ आया। उसने अम्बड़ को सम्पूर्ण निगल लिया।

बागवान ने पीछे मुडकर देखा तो अम्बड़ गायब था। अत: उसने लौटकर अमरावती को समाचार दिए। अमंगल समाचार सुनकर अमरावती बेहोश हो गई।

राजर्षि को पता चलने पर वे तत्काल महल में आ गए एवं पुत्री को आश्वासन दिया।

इधर अम्बड़ को निगलकर मत्स्य आगे बढ़ा वहाँ किसी शिकारी ने अपनी जाल में फंसा लिया। मत्स्य बड़ा था अत: पांच सात मच्छीमारों ने उसे खींचकर किनारे पर करके उसका निकाल करने के इरादे से उस पर चाकू चलाया।

मत्स्य के उदर में से किसी जीवित पुरुष को निकला जान वे उसे अपनी बस्ती में ले गए तथा एक कमरे में उसे छोड़ दिया।

अब अम्बड़ ने सोचा मुझे योगिनी के आदेश का पालन करना चाहिए। अत: सर्वप्रथम उसने नवलक्ष नगर की राह पकडी। जब वह नगर के बाहर आया तब मध्यरात्रि हो चुकी थी। सर्वत्र अन्धकार व्याप्त था।

अचानक अम्बड ने पदचाप सुनी तो वह एक तरफ छुप गया। इतने में चार कन्याएँ वहाँ से गुजरी। अम्बड़ भी उनके पीछे-पीछे अन्धकार को चीरते हुए चलने लगा।

उन कन्याओं में जो व्याधपुत्री थी वह बोली - आज चौराहे से उसी जहाज के व्यापारी के यहाँ जाना है ना ?

अन्य तीनों सखियों ने मस्तक हिलाकर स्वीकृति प्रदान कर दी। वे चारों आगे-आगे चलने लगी।

अम्बड़ ने सोचा- शायद ये वहीं जा रही है जहाँ मुझे योगिनी के आदेश का पालन करने के लिए जाना है। क्यो न मैं इनके पीछे-पीछे चला जाँऊ ?

इतने में अम्बड ने देखा कि चारों सखियों ने बकरी का रूप बना लिया और चौराहे से आगे निकल गई।

अम्बड़ ने भी अजविद्या से बकरे का रूप बनाकर उनका पीछा किया। चार बकरियां और एक बकरे ने समुद्री व्यापारी की हवेली में प्रवेश किया।

श्रेष्ठि कन्या रूपिणी महल में अपनी बन्दरियां के साथ खेल रही थी। उसने सखियों से पूछा- 'सच बताओ, यह पांचवाँ बकरा कौन है ?'

सखियों ने भी चौक कर कहा - 'हमें पता नहीं है कि यह कौन है'

तब रूपिणी ने कहा - 'हे देव . तुम कौन हो ?'

अम्बड़ ने भी योग्य समय जानकर अपना यथार्थ रूप प्रकट कर अपना परिचय देकर कहा - 'मैं गोरख योगिनी की आज्ञा से यह बन्दरियाँ लेने आया हूँ।'

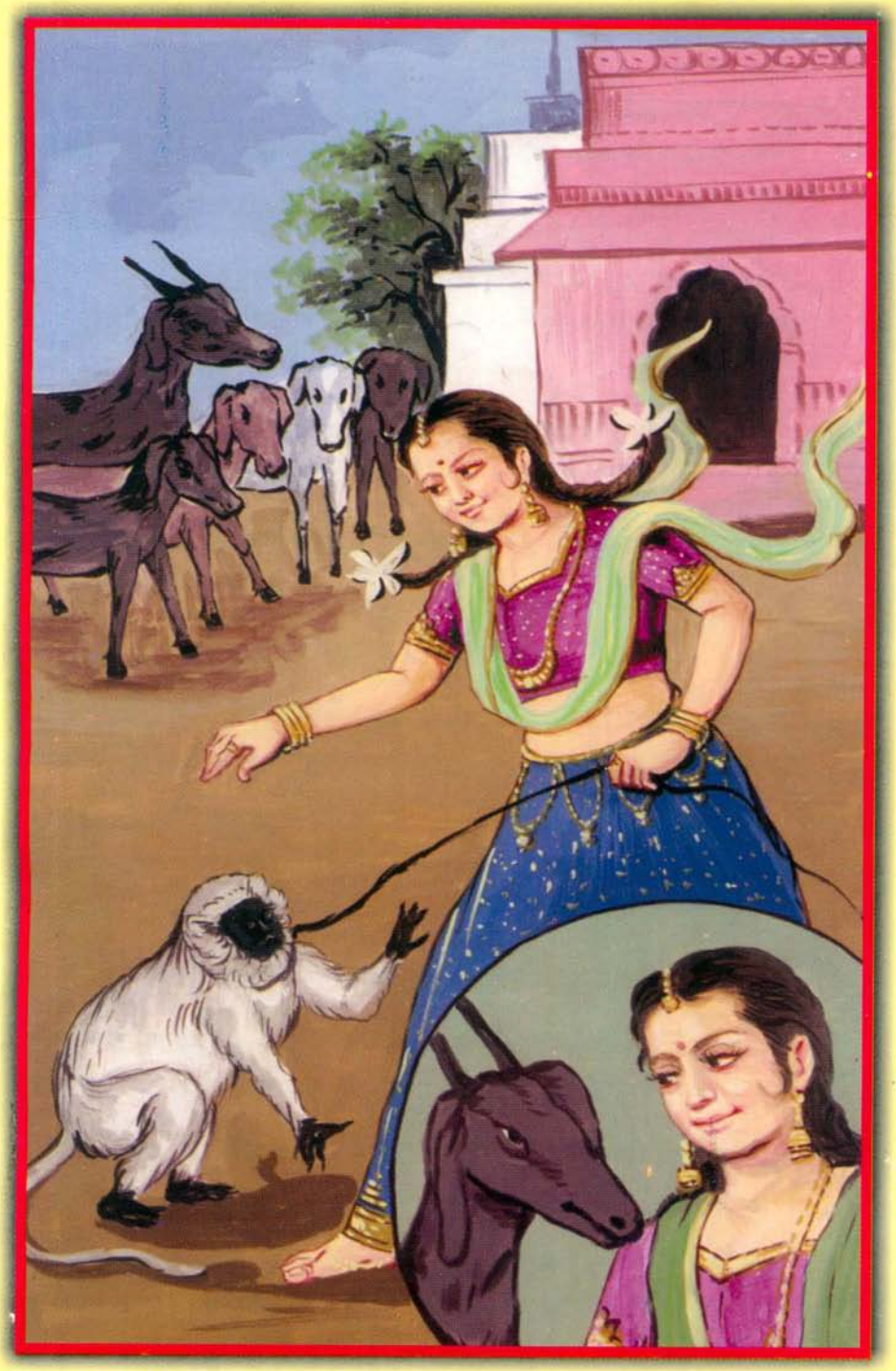

रूपिणी के घर उसकी सखियों के साथ अंबड भी बकरे का रूप बनाकर
जा पहुँचा। रूपिणी बकरे पर मोहित हो गई।

अम्बड़ के रूप पर मोहित हो रूपिणी ने कहा - 'मैंने मेरा सर्वस्व आपको समर्पण कर दिया है अत: अब मेरा स्वतन्त्र कुछ भी नही है किन्तु यह बन्दरियां मेरा जीवन है। चन्द्रदेव ने यह मुझे दी है एवं कहा है जब तक यह बन्दरियां तेरे पास है तब तक तेरे सारे मनवांछित मनोरथ पूर्ण होंगे। साथ ही प्रतिदिन यह बन्दरियां दो लाख सुवर्ण मुद्राएँ भी तुझे प्रदान करेगी। अत: यदि आपको यह बन्दरियां चाहिए तो मेरे साथ शादी कर लीजिए इससे यह बंदरियां आपकी हो जाएगी।'

अम्बड़ ने कहा - 'मैं तेरे साथ शादी करने को तैयार हूँ। तू तेरे पिताजी से विवाह की अनुमति ले ले।'

रूपिणी ने कल्पनाओं में बहते अम्बड़ से कहा- 'प्रिय .. मेरे साथ वैसे ही विवाह नहीं हो सकता है।'

'तो इसके लिए मुझे क्या करना होगा ?' अम्बड़ ने पूछा।

'यदि मेरे साथ शादी करना हो तो प्रथम आपको हमारे नगर की राजकुमारी के साथ पाणिग्रहण करना होगा उसके बाद ही मेरे साथ आपका विवाह सम्भव होगा। रूपिणी ने कहा

अम्बड़ ने पुन: प्रश्न दोहराया - 'राजकुमारी के साथ शादी सम्भव कैसे हो सकेगी ?'

' जिसके पास अज विद्या हो उसके लिए क्या असम्भव है ?'

रूपिणी ने कहा - 'आप महाराजा मलयचन्द्र को अज विद्या द्वारा बकरा बना दीजिए। फिर बाद की सारी बात यूँ ही बन जाएगी।'

अम्बड़ को भी श्रेष्ठिकन्या रूपिणी की बात उचित लगी एवं वह वहाँ से निकल कर प्रात: होने से पूर्व ही राजमहल के द्वार पर पहुँच गया।

अपनी अज विद्या के प्रभाव से उसने महाराज मलयचंद्र को बकरा बना दिया और अपने गन्तव्य की ओर जाने लगा। किन्तु उसके मन में प्रश्न यह उठ खडा हुआ था -कि राजा को बकरा बनाने से राजकुमारी के साथ शादी कैसे होगी ?

परकाया प्रवेश एवं राजकुमारी रोहिणी

नवलक्ष नगर शोक सागर में डूब गया था। यत्र तत्र सर्वत्र एक ही चर्चा का विषय था कि महाराजा मलयचन्द्र अचानक सबेरे उठे तब वे बकरा बन गए थे। अब क्या किया जाए ?

नगरजन राजा के बकरे बन जाने से चिंतित थे किन्तु महामन्त्री और सेनापति राजा के बकरा बन जाने से तो चिंतीत थे ही किन्तु इसके साथ-साथ उन्हें राज्य रक्षा की चिंता भी सता रही थी। वे राज्य रक्षा के लिए कुछ सोच ही रहे थे कि अचानक राज्य के गुप्तचरों ने उन्हें आकर समाचार दिए - 'कोई शत्रु राजा का सैन्य नवलक्ष नगर की ओर कूच करते हुए आ रहा है।'

'तुम क्या बात कर रहे हो ?' महामन्त्री सहसा बोल उठे।

सेनापति ने पूछा- 'उनकी गति कैसी है ?'

'यदि वे सोचे तो आज मध्यान्ह से पूर्व नवलक्ष नगर पर धावा बोल सकते है।' गुप्तचर नायक ने कहा

महामन्त्री ने तत्काल आदेश दिया - 'नगर के चारों द्वार तत्काल बन्द कर दो।'

सेनापति से उन्होंने कहा - 'तुम युद्ध की तैयारियाँ करो। मातृभूमि की रक्षा राजा की अनुपस्थिति में हमें करना ही होगी।'

तत्काल महामन्त्री के आदेश का पालन किया गया। चारों द्वार बन्द कर दिए गए। सेनापति ने चारों द्वार पर सेना लगा दी।

इतने में महामन्त्री को सिंह द्वार के रक्षकों ने आकर महामंत्री से कहा - 'रथनुपुर के महाराजा मात्र नगर देखने हेतु ही आए है वे नगर में प्रवेश की अनुमति चाहते है ?'

महामन्त्री ने गुप्तचरों से पुनः तलाश करवाई गुप्तचरों ने आकर कहा- 'पृथ्वी के बेजोड़ नरपति अम्बड़ आए है अतः उन्हें सम्मान सहित नगर में प्रवेश करना चाहिए।'

महामन्त्री ने नगर के द्वार खोल देने की आज्ञा दी। नरपति अम्बड़ को भव्य स्वागत के साथ नगर में प्रवेश कराया गया।

अम्बड़ भी कुछ न जानता हो इस तरह महामंत्री से पूछता है - 'तुम लोग उदास क्यों हो ? यहाँ के राजा क्यों नहीं दिखाई दे रहे है ?

महामन्त्री ने कहा - 'हमारी उदासी का कारण हमारे राजा ही है। न जाने किसी ने उन्हें बकरा बना दिया है।'

'अच्छा तो बात यह है।' अम्बड़ नरपति बोला - 'तुम चिंता न करो, मैं तुम्हारें राजा को पुनः मनुष्य बना दूँगा।'

'हम आपका उपकार जिंदगी के अंत तक नहीं भूलेंगे।' महामन्त्री ने कहा

'यह तो ठीक है।' अम्बड़ ने कहा - 'किन्तु इससे मुझे क्या लाभ होगा ?'

'हम आपको इसके बदले में राजकन्या वीरमती की शादी एवं आधा राज्य प्रदान कर देंगे। इससे अधिक ओर आपको क्या चाहिए ?'

अम्बड़ को यही चाहिये था। उसने सन्तुष्ट होकर राजा मलयचन्द्र को मनुष्य बना दिया। इससे नगर में उत्सव सा वातावरण हो गया।

राजा मलयचन्द्र ने भी महामन्त्री के कथनानुसार अम्बड़ की शादी अपनी पुत्री वीरमती के साथ करके आधा राज्य प्रदान किया।

राजकुमारी की शादी के समाचार श्रवणकर समुद्री व्यापारी कि जिसने पहले से ही तय कर रखा था कि राजसुता की शादी जिसके साथ होगी उसी के साथ में अपनी पुत्री रूपिणी की भी शादी करूंगा।

समुद्री व्यापारी ने अपनी पुत्री रूपिणी और उन चारों सखियों की शादी अम्बड़ के साथ कर दी।

अम्बड़ क्षत्रिय भी अपनी छह प्रियाओं के साथ संसार के सुखों को भोगते हुए समय व्यतीत कर रहा था किन्तु उसके मन में अमरावती का विरह सता रहा था। सब कुछ होने के बाद भी अमरावती उसे याद आ जाती थी।

अम्बड़ आकाश गामिनी विद्या के प्रभाव से उसी सुगन्धवन में जा पहुँचा। वहाँ वन में ही उसे वह बटुक बागवान मिल गया जो कि पहले भी उसे बुलाकर अमरावती के पास ले गया था।

बटुक बागवान ने अम्बड़ को तत्क्षण पहचान लिया। वह दौड़कर राजर्षि को बुला लाया। अम्बड़ ने राजर्षि के चरणों में नमस्कार किया। साथ ही अपने साथ क्या-क्या बीती थी ? क्या-क्या प्राप्त हुआ ? सारी घटना सुना दी।

राजर्षि ने सोचा - 'अब विलम्ब करना उचित नहीं है।' अतः राजर्षि ने वहीं अमरावती का विवाह अम्बड़ के साथ कर दिया।

अम्बड़ भी राजर्षि से आशीर्वाद लेकर अपनी मातृभुमि की तरफ चल दिया।

अम्बड़ अपनी वीरमती सहित अन्य छह रानियों को भी ले आया तथा सातवीं अमरावती को साथ लेकर रथनुपुर आया।

सर्वप्रथम वह गौरख योगिनी के पास गया। योगिनी के चरणों में नमस्कार कर उसने रूपिणी से बन्दरियां लेकर योगिनी को समर्पित की।

योगिनी के मुख से उदगार निकले धन्य है अम्बड़ तुझे एवं धन्य है तेरी जननी को जिसने तेरे जैसे वीर, पराक्रमी पुत्र को जन्म दिया।

उस दिन से अम्बड़ वीर शिरोमणी के रूप में इस पृथ्वी पर विख्यात हो गया ।

क्षणार्ध रुककर गौरख योगिनी ने अपना पाँचवां आदेश सुनाते हुए कहा - 'सौराष्ट्र देश में देवपत्तन नामक नगर है। वहाँ के राजा देवचन्द्र का वैरोचन नामक मंत्री है। उस मन्त्री के पास रविचंद्र नामक दीपक है। वह दीपक लाकर मुझे दे।'

आदेश पाते ही अम्बड़ ने सौरठ देश की राह पकडी। रास्ते में उसे कोई एक ब्राम्हण मिला।

अम्बड़ ने विप्र से पूछा -'ब्राम्हण देवता ..,.. आप कहाँ से पधार रहे है ?'

'मैं देवपत्तन से आ रहा हूँ। विप्र ने उत्तर दिया।'

'और आप कहाँ जा रहे हैं ?'

'मैं सिंहपुरी जाने को निकला हूँ।'

'सिंहपुरी जाने का प्रयोजन ?'

'प्रयोजन के बिना तो कोई क्यों घर से निकले ?' ब्राम्हण ने कहा - मेरा प्रयोजन आप सावधान होकर सुनिए।

यहाँ से उत्तर दिशा में महादुर्ग नामक पर्वत है। उसकी तलहटी में

सिंहपुरी नामक नगरी है। उस नगरी में सागर चन्द्र नामक राजा राज्य करता था।

राजा को एक पुत्र एवं एक पुत्री है।

पुत्र का नाम समरसिंह है।

पुत्री का नाम रोहिणी है।

राजा सागरचन्द्र परकाय प्रवेशिनी विद्या भलीभाँति जानता था। राजा जब वृध्दावस्था से जीर्ण होते चला तब उसने अपने पुत्र समरसिंह को राजा बना दिया तथा अपने पास जो परकाया प्रवेशिनी विद्या थी। वह राजकन्या रोहिणी को प्रदान कर कहा- 'बेटी..! यह पर काया प्रवेशिनी विद्या तू किसी को भी मत सिखाना। यदि सिखाने की इच्छा हो तो मात्र एक ही व्यक्ति को सिखाना अन्यथा यह विद्या निष्फल हो जाएगी।

इतना कहकर राजा सागरचन्द्र संन्यास ग्रहण कर तापस बन गया। जंगल में जाकर वह साधना करने लगा।

अभी सिंहपुरी में समरसिंह राजा है एवं उसकी बहिन रोहिणी भी परकाया प्रवेशिनी विद्या के साथ अपनी सखियों के बीच आनंद प्रमोद से समय व्यतीत करती है।

ब्राह्मण ने अम्बड़ से कहा - मैं परकाया प्रवेशिनी विद्या सीखने सिंहपुरी जा रहा हूँ।

परकाया प्रवेशिनी विद्या के बारे में सुनकर अम्बड़ क्षत्रिय के मुँह में भी पानी आ गया। उसने ब्राम्हण से पूछा 'भू देव तुम भी कोई विद्या जानते हो क्या ? या वैसे ही घर से निकल पडे।'

शास्त्रों में कहा है :-

विनयेन विद्या ग्राहा, पुष्कलेन धनेन वा।
अथवा विद्यया विद्या, चतुर्थ नव दृश्यते।

विद्या तीन प्रकार से सीखी जाती है। एक तो विनय से विद्या सीखी जा सकती है दूसरा धन देकर विद्या सीखते है एवं तीसरा विद्या देकर विद्या सीखी जाती है। विद्या प्राप्ति को अन्य चौथा मार्ग नहीं है।

ब्राम्हण ने छींकते हुए कहा - 'मैं मूर्ख नहीं हूँ जो वैसे ही घर से निकल पड़ूँ। मेरे पास मोहिनी विद्या है। मोहिनी विद्या के बदले में मैं परकाया प्रवेशिनी विद्या सीखूँगा।'

'किन्तु राजकन्या ही तुम्हारा मुँह नहीं देखेगी तो तुम क्या करोगे ?' अम्बड़ ने प्रश्न किया।

ब्राम्हण इस प्रश्न का उत्तर न दे पाया। मनोमन वह उलझन में पड गया। उसने कहा - 'इसके लिए कोई प्रपंच तो करना ही पडेगा।'

वैसे तो मेरे पास भी लक्ष्मी प्राप्ति की विद्या है। अम्बड़ ने ब्राम्हण को ललचाते हुए कहा।

ब्राम्हण बोला - 'यदि आप सहमत होते है तो हम आपस में अपनी विद्या का आदान प्रदान कर लें।'

अम्बड़ यही चाहता था। उसने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की। एवं दोनों ने एक दूसरे को अपनी विद्या सिखाई।

अम्बड़ क्षत्रिय भी ब्राह्मण के साथ सिंहपुरी की ओर चल पडा। अम्बड़ ने सोचा - 'यह ब्राह्मण मेरे साथ रहेगा तो काम नहीं चलेगा। अत: किसी युक्ति से इसे नगर प्रवेश करते समय दूर किया जाना चाहिए।'

जब नगर के द्वार पर दोनो पहुँचे तब अम्बड़ ने युक्ति से ब्राह्मण को दूसरे द्वार से नगर में भेज दिया एवं स्वयं योगिनी का रूप बनाकर नगर में आया।

उसने लोगों में प्रचार किया - 'मैं अपनी विद्या के बल से भूत भविष्य एवं वर्तमान की बातें सरलता से बता सकती हूँ।'

बस योगिनी के पास भीड़ लगने लगी। नगर में घूमते हुए वह ब्राह्मण भी वहाँ आया। उसने योगिनी से पूछा - 'मैं जिस कार्य के लिए आया हूँ वह सिद्ध होगा या नही ?'

योगिनी ने कहा - तुम यहाँ नई विद्या सीखने आए हो। किन्तु तुम्हारे मनोरथ सिद्ध नहीं होंगे। योगिनी ने ब्राह्मण के भाग्य का फैसला करते हुए कहा योगिनी की बात सुनकर ब्राह्मण हताश-निराश हो गया। उसने सोचा - 'जो कार्य होना नहीं है उसके लिए निरर्थक पुरूषार्थ क्यों करना। भाग्य ही सर्वत्र फलता है विद्या और पुरूषार्थ नहीं।'

ब्राह्मण अपने नगर लौट गया।

इधर योगिनी के ज्ञान की बातें नगर में हवा की लहरों पर सवार होकर फैलने लगी। राजकुमारी रोहिणी को जब पता चला तो उसने सम्मान सहित योगिनी को राजमहल में बुलाया।

योगिनी भी राजमहल में पहुँची तो राजकन्या ने उसका भावभरा स्वागत किया। उसे सिंहासन पर बिठाकर उसकी पूजा की।

अम्बड़ द्वारा योगिनी का रूप धारण करना तो हमारे पाठकगण नहीं भूले होंगे ? उसने योगिनी के रूप में ही राजकन्या के दिल में आकर्षण पैदा कर दिया। राजकन्या को लगा कि इस सौन्दर्य की सरिता समान देहलता वाली यौवनावस्था में संन्यास क्यों लिया होगा ?

क्या इसके माता-पिता नहीं होंगे ?

क्या इसके भाई बहन आदि परिवार नहीं होगा ? या दारिद्रय के कारण इसने संसार से अलबिदा की होगी ?

इन सभी संकल्प विकल्प का अन्त करने के लिए उसने इस योगिनी से पूछा- 'इस युवावस्था में तुमने संन्यास क्यों लिया है ?'

अम्बड़ योगिनी के वेश में

पुण्य के उदय में व्यक्ति जहाँ भी जाता है वहाँ सम्मान पाता है। एवं पाप के उदय में व्यक्ति जहाँ भी जाता है वहाँ अपमान का शिकार होता है।

अम्बड़ क्षत्रिय भी पुण्य के उदय में यत्र तत्र सर्वत्र मान सम्मान पा रहा था। अभी वह सिंहपुरी नगरी में योगिनी के रूप में वहाँ की राजकुमारी रोहिणी को अपने आकर्षण में लेने का प्रयास कर रहा था।

सौन्दर्य और लावण्य से झरती देह लता वाली योगिनी को देखकर राजकुमारी रोहिणी ने योगिनी से पूछा- 'क्या मैं जान सकती हूँ कि आपने इस भर युवा अवस्था में संन्यास क्यों लिया ?'

योगिनी ने बडी चतुराई से प्रश्न को टालने के लिए कहा - 'जिस आग पर राख गिर चुकी है उसे तुम फूँक देकर उड़ाने का प्रयास न करों राजकुमारी। यूँ भी हम पूर्वाश्रम की बातें पुनर्जन्म जैसी मानते है।'

'आप जो भी माने।' राजकुमारी बोली - 'किन्तु मुझे आपके वैराग्य का कारण जानना ही है। राजकुमारी ने आग्रह किया।'

योगिनी ने मधुर वाणी में कहा - 'तो सुनो राजकुमारी।'

श्रीपुर नामक नगर है।

उस नगर में सूरसेन नामक राजा राज्य करता है। उनकी महारानी का नाम सूर्यकान्ता और मैं राजा रानी की इकलौती बैटी, सुरसुन्दरी मेरा नाम।

'राजकुमारी, क्या बताऊँ तुम्हें ?'

मेरे शैशव के श्रृंगार भी अभी नहीं उतरे थे कि मेरी माता का देहान्त हो गया। मैं निराधार हो गई। मुझ पर मानों दु:ख के पहाड टूट पडे।

कहा भी है कि - बचपन में माता पिता का स्वर्गवास युवावय में पत्नी का या पति का स्वर्गवास तथा वृध्दावस्था में पुत्र का स्वर्गवास बडा ही कष्टदायी होता है।

माता की मृत्यु हो जाने पर पिताजी महाराजा सूरसेन ने मुझे लाड़ प्यार से बडी की। इतना तो कहूँगी कि पिताजी ने मुझे कभी भी माताजी का अहसास नहीं होने दिया।

जब मैंने यौवन की दहलीज पर कदम रखे तब मेरा यौवन सोलह कला खिल उठा। मैं रूपवती तो थी ही। मैं भी अपने आप को मृत्युलोक की सर्वाधिक सौन्दर्यवती अप्सरा ही मानती थी। और यह सच भी था।

एक दिन की बात है।

मैं अपने सप्तभूमि प्रासाद की आगासी में अपनी सखियों के साथ बैठी थी। उस समय आकाश मार्ग से मणीभद्र नामक कोई विद्याधर वहां से गुजरा। उसने रूप और सौन्दर्य के झरने समान मुझे देखी। देखता ही रह गया। उसके अन्तर में मेरे लिए प्यार उत्पन्न हो गया। मेरे रूप पर मोहित हो उसने मेरा अपहरण किया।

सीधा वह मुझे वैताढ्य पर्वत पर ले गया। वैताढ्य पर्वत याने विद्याधरों की दुनिया। वह मणीभद्र भी वैताढ्य पर्वत पर ही रहता था। उसने मेरे

साथ पाणिग्रहण करने के इरादे से मुझे प्रसन्न करने का भरपूर प्रयास किया । रोहिणी प्रज्ञप्ति दो विद्याएं भी सिखाई ।

जैसे ही वह मेरे साथ पाणिग्रहण करने की तैयारी करने लगा, इतने में उसका पुत्र समुद्रवेग यहाँ आ धमका । सौन्दर्य की सरिता समान मुझे देख वह कामाग्नि से जलने लगा । उसने उसी क्षण अपने पिता विद्याधर मणीभद्र की हत्या कर दी । इससे पूरे विद्याधर आलम में सन्नाटा छा गया ।

समुद्रवेग ने पिता की हत्या की उसमें कारण तो मेरा रूप ही था, यह मैं भली भाँति जानती थी । अत: मुझे मेरे रूप, सौन्दर्य, लावण्य पर खूब ही गुस्सा आया । मैं कुछ करूँ इससे पूर्व वहाँ किरणवेग विद्याधर आ धमका उसने समुद्रवेग की क्रूरतम हत्या कर दी ।

मेरे सौन्दर्य के दीवाने दो - दो विद्याधरों की क्रूर हत्या ने मेरे हृदय को हिला दिया । मुझे अपने रूप पर तिरस्कार पैदा हो गया । मैंने मनोमन अपने रूप और सौन्दर्य को नष्ट करने का निर्णय किया साथ ही जीवन से भी नफरत पैदा हो गई ।

किसी भी तरह मैं वहाँ से भाग निकली । जंगल में जाकर एक गहरे कुएँ में कूदकर मैंने आत्महत्या करने का निश्चय किया ।

मैं एक कुएँ के पास जा पहुँची । पास में वृक्ष की डाली पर चढ़कर उस कुए में कूद ही रही थी कि अचानक किसी ने मेरा हाथ पकड लिया । एवं कुएँ में कूदने से मुझे रोक लिया ।

'वह हाथ पकड़ने वाला कौन था माताजी.... ?' राजकुमारी रोहिणी ने बीच में ही पूछ लिया ।

हाथ पकड़ने वाला किरणवेग विद्याधर ही था । जिसने मेरे रूप के दीवाने बनकर समुद्रवेग की हत्या की थी ।

किरणवेग का प्रेम देखकर मैंने अपना जीवन उसे समर्पित कर दिया ।

मेरे साथ गन्धर्व विधि से विवाह कर वह मुझे अपने साथ ले गया। उसके साथ रहकर मैं संसार के विषयजन्य सुखों को भोगती हुई अपना समय व्यतीत करने लगी।

किन्तु एक दिन मुझे पता चला किरणवेग किसी अन्य स्त्री में आसक्त है अतः मुझे बहुत दुःख हुआ। मुझे लगा कि मेरे साथ धोखा हुआ। किरणवेग मेरा उपयोग मात्र शारीरिक वासनाएँ भोगने के लिए ही करता है बाकि यह प्रेम अन्य युवती के साथ रखता है। तब मैं मानसिक रूप में आहत हो गई। क्योंकि मैंने अपना सर्वस्व उसे सौंप दिया था।

मैंने अनेक प्रकार के विनय अनुनय से किरणवेग को समझाने का प्रयास किया किन्तु मेरे सारे प्रयास निष्फल ही रहे।

वैसे भी पुरुषों का प्रेम स्थिर कब रहा है ? शिकारी की तरह वे नित्य नए भोग उपभोग के लिए भटकते रहते है। स्त्री तो उनके मन में वस्त्र से अधिक कुछ नहीं , एक वस्त्र पुराना हो जाए तो उसे छोड़कर नया वस्त्र धारण कर लेने जैसी सामान्य घटना है।

इससे मेरे मन में वैराग्य पैदा हो गया। और मैंने संसार की असारता को समझकर संन्यास स्वीकार लिया। कुछ समय गंगा नदी के किनारे पर तप साधना करके अब तीर्थ यात्रा करने के लिए निकली हूँ। एवं घूमते-घूमते अभी तुम्हारे नगर में आई हूँ।

योगिनी ने अपने वैराग्य का कारण बतलाते हुए अपनी वाणी को विराम दिया।

योगिनी का जीवन वृतान्त श्रवण कर राजकुमारी रोहिणी के दिल में सहानुभूति उत्पन्न हो गई। उसने योगिनी से कहा - 'माताजी आप सुपात्र है आपको पाकर मैं अपने आप को धन्य मानती हूँ। मेरे पास पर काया प्रवेशिनी विद्या है उसे आप ग्रहण करें।'

पाठकगण भूले तो नहीं होंगे कि योगिनी का रूप धारण करने वाला अपनी कहानी का नायक अम्बड़ क्षत्रिय स्वयं ही है।

योगिनी को यही चाहिए था। राजकुमारी ने योगिनी को परकाया प्रवेसिनी विद्या सीखाई। एवं पूछा - 'माताजी... क्या आप बतला सकती हो कि मेरा भावी पति कौन होगा ?'

प्रश्न सुनते ही योगिनी के अन्तर में आनंद छा गया किन्तु फिर भी उसने चेहरे के भाव नहीं बदलने दिए। आँखें मूँद ली तथा ध्यान मग्न हो गई। क्षणार्ध में आँखें खोलकर बोली - 'राजकुमारी तेरा भाग्य बड़ा ही उज्जवल दिखाई दे रहा है। सौन्दर्य का सागर, पराक्रमी धीर, वीर एवं गम्भीर अम्बड़ नरपति तेरा पति होगा।'

सुनकर राजकुमारी आनंदित हो उठी। उसके रोम-रोम में हर्ष की लहर फैल गई। उसने पूछा - 'वे मुझे कहाँ मिलेंगे और उनकी पहचान कैसे होगी ?'

योगिनी ने कहा - 'कुछ ही दिनों में वह यहाँ आएगा। एवं तेरी मालिन की लड़की के साथ तेरे लिए सुन्दर कलात्मक कंचुकी भेंट भेजेगा उसे तू अम्बड़ नरपति मान लेना।'

योगिनी खड़ी हो गई। राजकुमारी ने प्रणाम किया । योगिनी भी अपने स्थान पर चली गई। अब योगिनी को अपने रूप का कोई कार्य न रहा अत: उसने योगिनी का रूप छोड़ दिया तथा पुन: अम्बड़ के रूप मैं आकर अपना कार्य करने के लिए देवपत्तन की और चल दिया।

योगिनी के आदेश से उसे देवपत्तन नगर के मन्त्री वैराचन के यहाँ से रविचन्द्र नामक दीपक लाना था।

देवपत्तन के उद्यान में जाकर अम्बड़ एक वृक्ष की छाया में बैठा था कि वहाँ एक मालिन आई उसने कहा - 'हे नरश्रेष्ठ...! मेरी पुत्री देमती तुम्हारे

रूप पर मोहित हो गई है अत: उसके साथ पाणिग्रहण कीजिए।'

देमती भी कलात्मक पुष्पहार लेकर उपस्थित हो गई । यौवन के भार से झलकती उसकी देहलता अत्यंत मोहक लग रही थी। अम्बड़ ने उसको अपनी सहयोगी मानकर उसके साथ विवाह किया।

अपना कार्य साधने के इरादे से अम्बड़ ने देमती से कहा- 'तू प्रतिदिन राजा को हार देने जाती है ना। तो आज यह पुष्पहार राजा और मंत्री को पहना आना।'

देमती ने वैसा ही किया । एवं इधर अम्बड़ ने मंत्रित चूर्ण नगर की दीवारों पर डाला अत: वे किले की दीवारे कपडे की तरह हिलने लगी। इसे देख नगरजन घबरा गए। वे दौड़कर राजा तथा मंत्री के पास गए।

मंत्री और राजा को देमती ने पुष्पहार पहना दिए थे। वे दोनों हार मंत्रित होने से राजा और मंत्री दोनों पागल हो चुके थे एवं गंवारों की तरह कपडे फाड़कर चिल्लाते हुए नगर के राजमार्गो पर यत्र-तत्र दौडने लगे।

नगरजन यह देखकर घबरा गए। वे सोचने लगे राजा ही आसरा होता है नगरजनों का, और वहीं पागल हो गया है एवं नगर प्राचीर की दीवारें भी हिल रही है आखिर हमारा अब क्या होगा ?

राजकुमारी रोहिणी

प्रात: काल का समय था। अभी सूर्य रश्मियॉ धरा चुम्बन लेने नहीं आयी थी। विहंग वृंद की सुमधुर सुरावलियों से गगन गुंजायमान हो उठा था। वातावरण मनमोहक था। किन्तु देवपत्तन नगर शोक में डूबा हुआ था।

कारण यही था कि अम्बड़ नरपति ने अपने मन्त्रित चूर्ण से नगर की प्राचीरों की दीवारें कपडे की तरह कम्पायमान कर दी थी एवं राजा तथा मन्त्री पागल हो चुके थे।

आज प्रात: होने से पूर्व ही राजा तथा मंत्री पागल की तरह चिल्लाते हुए राजमार्ग पर दौड़ते हुए दृष्टिगोचर हुए। इतना ही नहीं, दिन प्रतिदिन उनका पागलपन बढ़ता जा रहा था।

दूसरे दिन वे दोनों सियार की तरह चिल्लाते हुए राजमार्ग पर नजर आए और तीसरे दिन तो दोनों नग्र होकर नृत्य करने लगे।

चौथा दिन जब प्रगट हुआ तब नगरजनों ने देखा कि उनका राजा और मंत्री एक दूसरे पर कीचड़ उछाल कर उच्च स्वरों में गधों की तरह भौंकने लगे है।

दिन प्रतिदिन उनका पागलपन बढते हुए नजर आने लगा पाँचवें दिन वे दोनों उन्मत्त हो बेसुर मृदंग के आलाप लगाने लगे। यहाँ तक कि छठ्ठे दिन वे दोनों परस्पर गले लगकर करूण विलाप करने लगे।

इस तरह छह दिन बीत जाने पर अम्बड़राज ने अपनी प्राणेश्वरी मालिन से पूछा- नगरजनों की दशा कैसी है ?

'नाथ नगर की अवदशा की बात पूछ रहे है ना आप ?' मालिन बोली - 'सम्पूर्ण नगर में ग्लानि फैली हुई है। भय के मारे नगरजन मृत्यु से भी अधिक भयभीत है। यदि यह उपद्रव आप शांत कर देते है तो नगरवासियों पर महती कृपा होगी। प्राणेश....! आप अपनी चमत्कारी शक्ति को समेट ले।'

अपनी प्रिया की बात मानकर अम्बड़ नगर के द्वार पर पहुँचा जहाँ किले की दीवारें वस्त्र की तरह इधर उधर फरक रही थी। अम्बड़राज ने मंत्रोच्चार किया कि दीवारें पहाड़ की तरह अचल हो गई।यह देख नगरजनों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वे इतना तो अवश्य समझ चुके थे कि यह कोई मन्त्र सिद्ध पुरूष है।

नगरजनों ने नम्र स्वरों में अम्बड़ नरपति से प्रार्थना की -'हे नरश्रेष्ठ.. ! नगर के प्रचीर की दीवारें स्थिर कर तुमने हम पर अनन्त कृपा की है अब उसी तरह हमारे राजा तथा मंत्री को भी स्वस्थ बनाकर उन्हें एवं हमें संकट मुक्त करने की कृपा करें।

'नगरजनों ....!' अम्बड नरपति बोला - 'मैं तुम्हें घडी के छटें मिनिट में संकट मुक्त कर सकता हूँ किन्तु इसके बदले मुझे क्या मिलेगा ?

'आप जो चाहे माँग लेना।' नगरजन बोले - 'हम तुम्हें मुँह मांगी वस्तु देकर उपकार का बदला चुका देंगें। चाहे उसके लिए आकाश पाताल एक क्यों न करना पड़े।' सप्ताह भर से त्रस्त नगर जन बोल उठे।

अम्बड़ ने स्पष्ट माँग करते हुए कहा - 'मुझे अपने कार्य के बदले में तुम्हें आधा राज्य और राजकुमारी देना होगी तथा मंत्री वैराचन के यहाँ रहा हुआ रविचन्द्र नामक दीपक देना होगा।'

'हमें आपकी मांग स्वीकार है सिद्ध पुरूष... ।' नगरजन बोले आप तत्काल राजा एवं महामंत्री को ठीक कर दीजिये और बदले में हमसे अपनी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त कर लीजिए।

अम्बड ने तत्क्षण अपनी प्रतापी विद्या शक्ति से महाराजा और महामन्त्री को स्वस्थ कर दिए। परिणामत: नगर जन हर्षित हो उठे। नगर में महोत्सव का माहौल जम गया। यत्र तत्र सर्वत्र अम्बड़ नरपति की प्रशंसा होने लगी।

राजा तथा मंत्री ने भी अम्बड़ का उपकार स्वीकार करते हुए आभार माना। इतना ही नहीं शर्त के अनुसार नगरजनों के कहने से अपना आधा राज्य एवं अपनी मदिरावती नामक कन्या की शादी अम्बड़राज के साथ की।

महामन्त्री वैरोचन ने भी रविचन्द्र नामक दीपक अम्बड़ को भेंट दे दिया। साथ ही अपनी करमंजरी नामक सुता की शादी भी अम्बड़राज के साथ की।

अब अम्बड़राज अपनी तीन प्रियाओं के साथ दाम्पत्य जीवन का आनंद लूटने लगा।

अम्बड़ ने एक दिन सोचा - अब मुझे तत्काल अपने नगर को जाना चाहिए एवं बिना विलम्ब योगिनी को आदेश पालन का समाचार देकर रविचन्द्र दीपक सुपुर्द करना चाहिए।

वह अपनी तीनों प्रियाओं को साथ लेकर अपने नगर की ओर चल पड़ा।

रास्तें में उसके कर्णपट पर किसी स्त्री के रुदन की आवाज आई। अम्बड़ ने सोचा - इस घने वन में नारी रुदन की आवाज कहाँ से आ रही है ? अवश्य कोई नारी संकट से जुझ रही होगी अत: मुझे उसकी सहायता करनी चाहिए।

अम्बड़ रुदन की दिशा में चल पड़ा। सामने से एक स्त्री अपने मृत पुत्र को कन्धे पर उठाकर आती हुई नजर आई।रुदन यही स्त्री कर रही थी। जब वह अम्बड़ के सम्मुख आयी तब अम्बड़ ने पूछा।

'भद्रे.....! तू रुदन क्यों कर रही है व अपने कन्धे पर यह शव किसका है ?'

हे नरपुंगव... । स्त्री बोली - मैं सिंहपुर के महाराजा समीरसिंह की

बहिन रोहिणी की दासी हूँ। मैं हमेशा मेरी स्वामिनी के लिए उद्यान से पुष्प एवं पुष्पमालाएँ लाकर देने का कार्य करती हूँ।'

दासी ने अपनी विरह कथा सुनाते हुए कहा - 'जब मैं अपने कार्य से बाहर गॉव गई थी तब अचानक मेरे इकलौते पुत्र को किसी नाग ने डस लिया और यह मृत्यु का ग्रास बन गया। पुत्र विरह में संतप्त मैं रुदन कर रही हूँ। अत: अब मैंने भी निर्णय किया है कि आत्महत्या कर अपनी जीवनलीला समाप्त कर दूँ।'

अम्बड़ नरपति बोला - 'बहन.. संसार में पैदा होने वाला कौन अमर होकर जीया है ? जो जन्म लेता है वह अवश्य ही मरता ही है। इस सनातन सत्य को स्वीकारना ही चाहिए। मरने वाले के पीछे रूदन करता या आत्महत्या करने से मृतआत्मा को ही दु:ख होता है एवं शास्त्रों में भी कहा है कि आत्महत्या करना महापाप है अत: तू आत्महत्या का विचार छोडकर स्वस्थता पूर्वक जीवन यापन कर।'

'यह तो मैं भी समझती हूँ नरपति....।' दासी ने कहा- 'किन्तु माँ की ममता को तुम कैसे समझ सकते हो ? मुझे अफसोस इस बात का है कि अन्त समय में मैं अपने बेटे से बात तक न कर सकी।'

'यदि मैं तुम्हारे पुत्र के साथ तुम्हारी बात करवा दूँ तो ?'अम्बड़ ने पूछा- 'फिर तो तुम आत्महत्या का विचार त्याग दोगी ना ?'

'तुम मेरा उपहास क्यों कर रहे हो नरश्रेष्ठ' दासी बोली- 'कर्मो ने तो मेरे साथ उपहास किया ही है और तुम भी उपहास करने लगे हो। क्या मृत पुत्र जीवित होकर वार्तालाप कर सकता है ?'

'मैं माँ की ममता से भली भाँति परिचित हूँ बहिन....।'अम्बड़ बोला मैं तेरा उपहास नहीं सत्य कह रहा हूँ। मैं तुझे तेरे पुत्र से चर्चा करवा सकता हूँ।'

'यदि यह सम्भव हुआ तो तुम्हारे जैसा दूसरा कोई भगवान नही भैया .....।' दासी बोली - 'जल्दी मुझे अपने पुत्र से चर्चा करवा दीजिए।'

अम्बड़ के पास राजकुमारी रोहिणी द्वारा प्रदत्त पर काया प्रवेशिनी नामक विद्या थी अत: उसी क्षण अम्बड़ उस विद्या के प्रभाव से मृत पुत्र के शरीर में प्रवेश कर गया।

और चमत्कार हो उठा। मृतपुत्र जीवित हो अपनी माता से बोला - 'माँ तू व्यर्थ रुदन कर अपनी आत्मा को मलिन कर रही है। मेरी आयु पूर्ण हो जाने पर मैं मृत्यु को प्राप्त कर संसार से चल बसा हूँ। अत: तू भी घर जाकर धर्म आराधना करके अपने जीवन को सफल करने का पुरुषार्थ कर.....।'

दासी की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। वह अपने पुत्र का अन्तिम संस्कार कर अपने घर चली गई।

अम्बड़ नरपति भी मालिन के पीछे-पीछे सिंहपुरी नगरी आया क्योंकि सौन्दर्य की सरिता समान राजकुमारी रोहिणी को वह अभी तक नहीं भूला था।

अपने उपकारी अम्बड़ को मालिन ने अपने उद्यान में खूब आग्रह के साथ ठहराया एवं अपने मृतपुत्र से वार्तालाप कराने वाले उपकारी पुरुष की ख्याति सर्वत्र फैलाई।

समय के साथ धीरे-धीरे अम्बड़राज की ख्याति राजकुमारी रोहिणी के अन्त:पुर तक पहुँच गई।

एक दिन राजकुमारी ने एकान्त पाकर अपनी दासी से पूछा - 'तेरे उद्यान में ठहरा वह पुरुष कैसा है ?'

'धीर.... वीर.... गम्भीर है वह....।' दासी ने कहा- 'क्यों कुछ काम है आपको ?'

'नहीं, मैंने तो ऐसे ही पूछा तुझसे।' राजकुमारी बोली।

दासी बोली - 'स्वामिनी उस पुरुष की बात क्या पूछती हो ? वह तो रूप का राजा है और सौन्दर्य का सागर है। यदि आपके साथ उसका

मिलाप हो जाए तो सागर सरिता का संगम ही हो जाएगा ।'

'मेरा ऐसा भाग्य कहाँ है दासी....!' राजकुमारी बोली - 'फिर भी तू उस नरश्रेष्ठ को मेरा प्रणाम कहना ।'

दासी अपने उद्यान में चली आई । उसने राजकुमारी के साथ हुई चर्चा अम्बड़ को कह सुनाई ।

अम्बड़ ने उसी समय पुष्प की कंचुकी बनाकर मालिन को देते हुए कहा - 'तुम्हारी स्वामिनी को यह कंचुकी मेरी तरफ से भेंट दे आ ....।'

मालिन उसी क्षण कंचुकी लेकर राजकुमारी के पास पहुँची एवं 'परदेशी प्रेमी द्वारा आपको यह कलात्मक पुष्प कंचुकी भेंट दी गई है ।' यह कहकर कंचुकी राजकुमारी को भेंट दी ।

उसी समय राजकुमारी को उस योगिनी की बात याद आ गई उसके आनंद की सीमा न रही । उसका भावी भर्तार आ गया जानकर उसके हृदय में आनंद व्याप्त हो गया ।

उसी क्षण राजकुमारी रोहिणी अपने भाई समरसिंह के पास दौड गई । एवं योगिनी के साथ हुए वार्तालाप का वृत्तांत कह सुनाया ।

समरसिंह ने भी अम्बड़ नरपति की ख्याति सुनी थी अत: उसने अपनी बहन की इच्छानुसार उसकी शादी अम्बड़ नरपति के साथ सम्पन्न करा दी ।

संसार के सुखों को भोगते हुए अम्बड़राज ने कुछ दिन वहाँ बिताए बाद में रोहिणी को भी साथ लेकर अपनी जन्मभूमि लौट आया एवं गौरख योगिनी के पास जाकर प्रणाम कर रविचन्द्र दीपक भेंट कर अपना सारा वृत्तांत सुनाया ।

गौरख योगिनी ने भी अम्बड़ को आशीर्वाद प्रदान किया । अम्बड़ ने कहा - 'हे माते.... मेरे लिए अब छट्ठा आदेश क्या है ?'

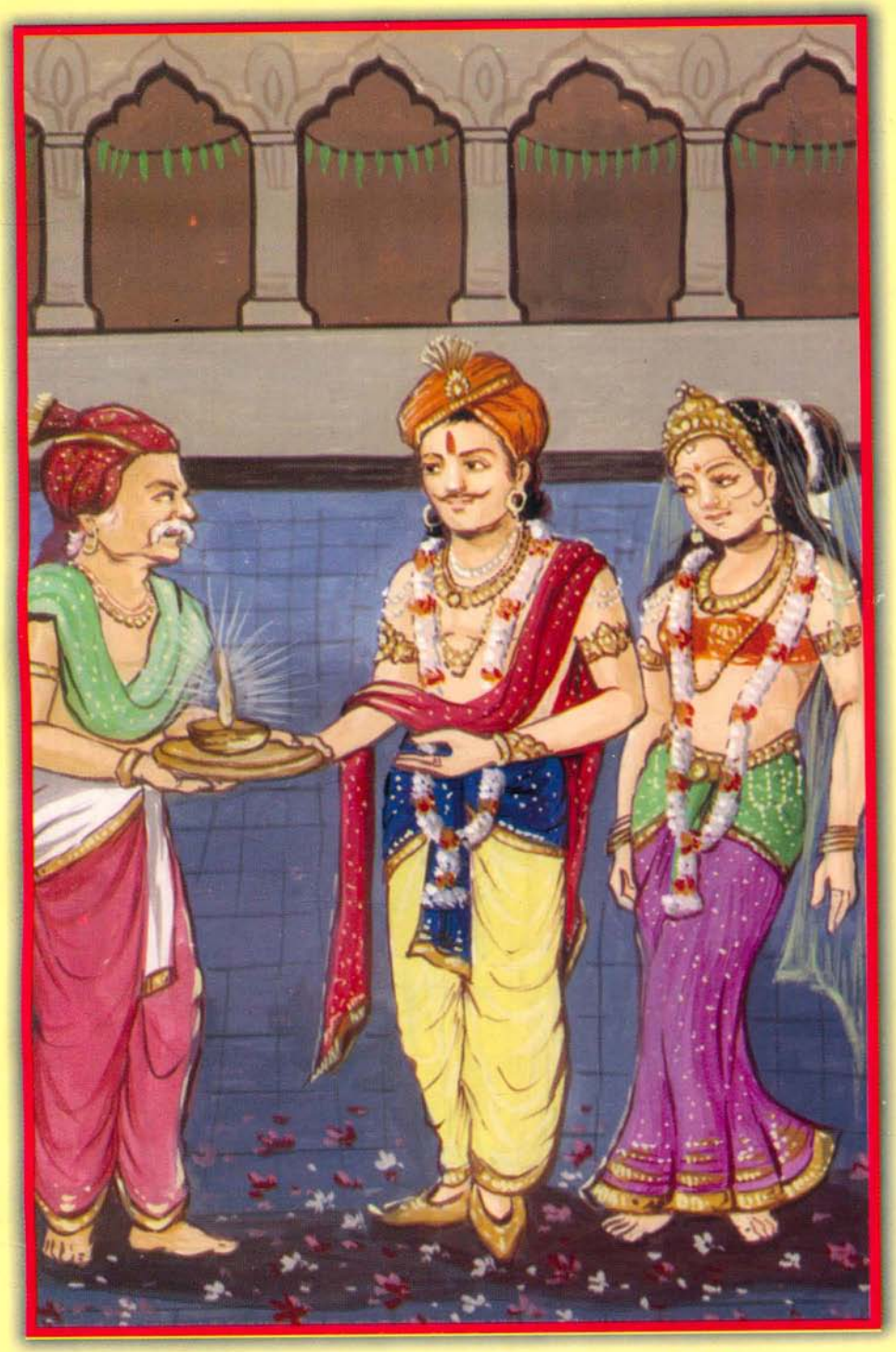

मंत्री वैरोचन की कन्या मदिरावती से शादी कर अंबडराज ने रविचन्द्र नामक दीपक प्राप्त किया जो उसे योगिनी को देना था।

नदी में तैरती झोपड़ी

'हे अम्बड़' गौरख योगिनी ने अपना छट्ठा आदेश सुनाते हुए कहा - 'सिन्धु सौवीर नामक देश में सिन्धु पर्वत के निकट कौडिन्य नामक नगर है। वहाँ के महाराजा है देवचन्द्र। महाराजा देवचन्द्र की राजसभा में वेदवेदान्त में पारंगत सौमेश्वर नामक पुरोहित है। उस राजपुरोहित के यहाँ सर्वार्थ सिद्ध नामक दण्ड है। वह दण्ड लोकर मुझे प्रदान कर...।'

'जैसी माताजी की आज्ञा ..... ।'

अम्बड़ क्षत्रिय ने सिन्धु सौवीर देश जाने के लिए आकाश मार्ग से प्रयाण किया। रास्ते मैं उसने एक नदी देखी। नदी का जल निर्मल था। वह नदी की खल बल, खल बल बहती जलराशि को देख रहा था कि अचानक उसके दृष्टिपथ में जल के प्रवाह में तैरती एक कुटिया आई।

अम्बड़ आश्चर्य चकित हो उठा। नदी के प्रवाह में भला यह घास की कुटिया कैसी ? वह नीचे आया तो उसे कुटिया स्पष्ट दृष्टिगोचर हुई। झोपडी को केले के पत्तों से सजाई गई थी उस पर अशोक के पत्तों से तोरण बांधा हुआ था।

कुटिया छोटी थी किन्तु स्वच्छ थी। उसमें एक योगी बैठा हुआ था। उसके सामने एक मृगी बैठी हुई थी। मृगी का रूप किसी सूर्य से कम नहीं था। उसके रूप से कुटिया पूरी तरह प्रकाश से जगमगा रही थी। योगी

उसी मृगी को पंखे से हवा कर रहा था।

अम्बड़ को समझते देर न लगी। उसने उसी क्षण उस प्रवाह में तैरती कुटिया को जल में स्थिर कर दी। इस पर योगी क्रोधायमान हो गया।

'अरे नराधम.... ! तू नाहक मेरी साधना में व्यवधान डाल रहा है।'

अम्बड़ ने कहा- 'योगीश्वर...। आप क्रोधित क्यों हो रहे हो ? मैं जानना चाहता हूँ कि मृगी को हवा करके आप कौन सी साधना कर रहे है ?'

'तुझे मेरी साधना से क्या मतलब है ?' योगी ने कहा 'तू अपने रास्ते चला जा अन्यथा अपने तप तेज से मैं तुझे भस्म कर दूँगा।'

'मैं तुम्हारी भयभरी बातें सुनकर दूर जाने वालों में से नहीं हूँ योगी।' अम्बड़ ने कहा - 'तुम योगी नहीं भोगी नजर आ रहे हो। तुम जल्दी बताओ कि यह मृगी तुम कहाँ से लाए हो अन्यथा मैं तुम्हे जीवित नहीं छोड़ूंगा। अम्बड़ क्षत्रिय ने अपनी तलवार निकाल ली।

योगी भी कम नहीं था। वह भी अपने आयुध लेकर तैयार हो गया। अम्बड़ और योगी में घमासान युद्ध हुआ किन्तु महापराक्रमी अम्बड़ क्षत्रिय के सामने योगी न टिक सका। अन्त में अम्बड़ के हाथ योगी मारा गया।

अम्बड़ ने कुटिया में प्रवेश किया। उसने देखा कि वह मृगी स्वर्ण जंजीर से बन्धनग्रस्त है। पास में रत्नों के कुंडलों को धारण करने वाला एक स्वर्णपुरुष खडा है। उसके पास श्वेत और रक्त वर्ण की छड़िया भी पडी है। अम्बड़ को लगा आखिर यह सब क्या है।

उसने मृगी से पूछा- 'हे मृगी..! यह स्वर्णपुरुष और बेत की दोनों छड़ी का रहस्य क्या है ? तू कौन है और योगी कौन था ?'

किन्तु मृगी बोलती कैसे ? अतः उसने कोइ प्रत्युत्तर नहीं दिया परिणामतः अम्बड़ क्रोधित हो उठा। पास में पडी छड़ी उठा कर अम्बड ने मृगी की पीठ पर फटकार दी।

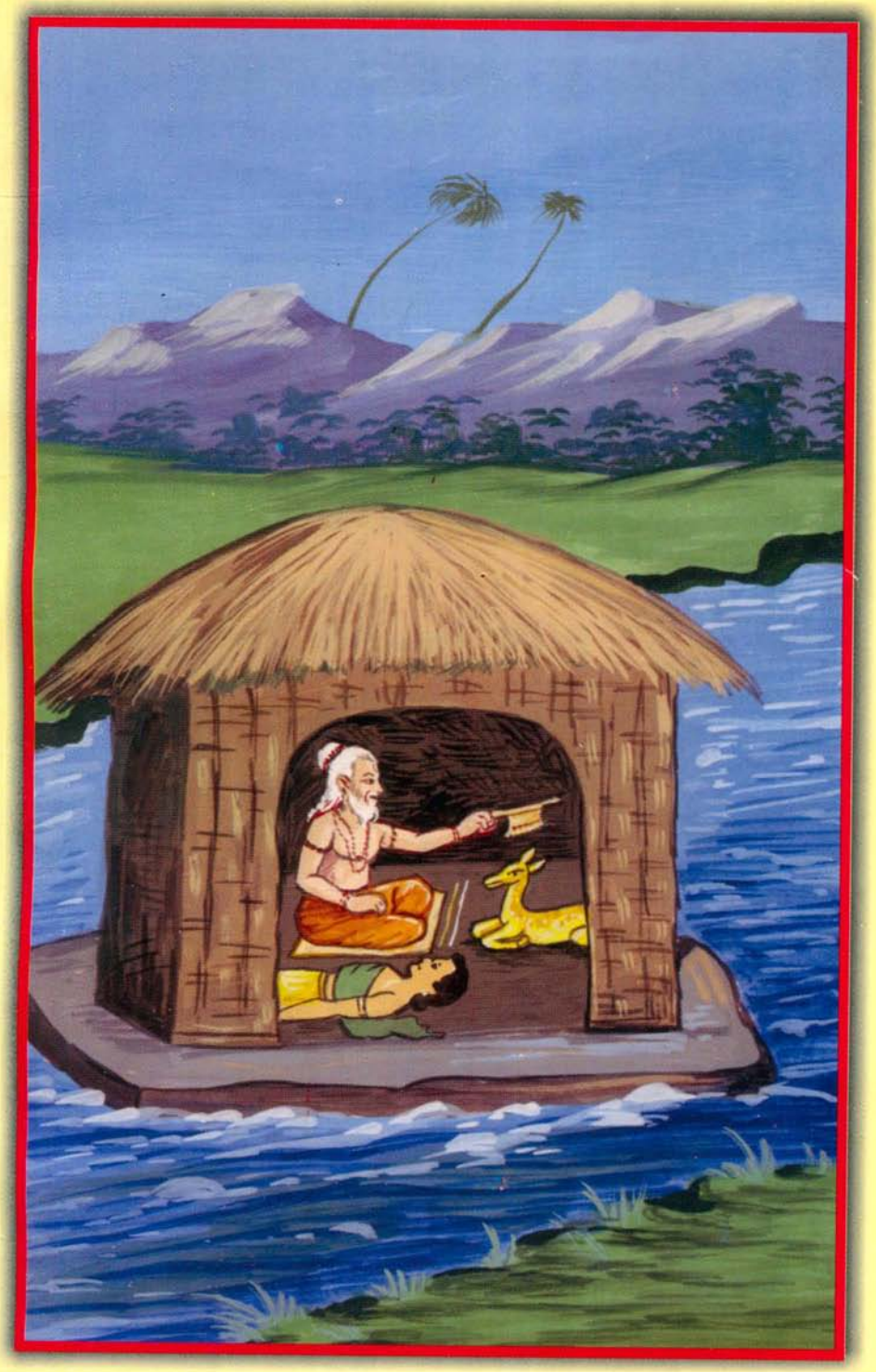

नदी के प्रवाह में अंबडराज ने झोपड़ी तैरते देखी। जिसमें कोई योगी हिरणी को पंखे से हवा कर रहा था। पास में स्वर्ण पुरूष एवं दो छड़ी भी रखी थी।

और चमत्कार हो गया। छड़ी का स्पर्श होते ही वह मृगी अप्सरा के समान रूपवती कन्या होकर खडी हो गई। इससे अम्बड आश्चर्यचकित हो गया।

अम्बड़ ने देखा कि युवती नवयौवना है। उसके देह से सौन्दर्य टपक रहा है। रूप और लावण्य के समान समान उस नवयौवना को देखकर अम्बड़ ने पूछा-

'क्या मैं जान सकता हूँ कि प्रभात के पुष्प की तरह खिले हुए इस यौवन का नाम क्या है ?'

'लोग मुझे रत्नावती के नाम से जानते है।' नवयौवना ने सुमधुर स्वरों में उत्तर दिया।

अम्बड़ ने पूछा- 'तू कौन है रत्नावती ..... ?'

'मैं बंगदेश की राजकुमारी हूँ नरश्रेष्ठ ...।' राजकुमारी बोली - 'तुम कौन हो नरपति ?'

'मुझे अम्बड़ क्षत्रिय के नाम से दुनिया जानती है।' अम्बड़ ने कहा- ''तेरे पिता का नाम ..... ?'

'मैं महाराजा वैरीसिंह की प्राण प्यारी इकलौती बेटी हूँ।'

'क्या तुम मुझे बता सकती हो कि वह योगी कौन था ?'अम्बड़ ने पूछा- इस स्वर्ण पुरूष का रहस्य क्या है ?

अम्बड़ का प्रश्न सुनते ही रत्नावती की आखों से अश्रुधारा बह निकली किन्तु फिर भी उसने धैर्य को धारण कर अपनी व्यथा भरी आत्मकथा सुनाना प्रारम्भ की।

आप जानते ही है कि बंगदेश की राजधानी भोजकटक नगर है। वहाँ मेरे पिताजी महाराजा वैरीसिंह राज्य करते थे। मैं महाराजा वैरीसिंह की

इकलौती प्यार-दुलार में पली प्राण प्यारी पुत्री रत्नावती हूँ।

एक दिन की बात है।

मेरे पिताजी राजसभा में उपस्थित थे। सभा की कार्यवाही चल रही थी कि अचानक वहाँ कोई योगी आया। उसने मेरे पिताजी को आशीर्वाद देकर जैसे ही अपना त्रिशूल जमीन में रोपा कि सभी के देखते वह त्रिशूल केल के पौधे में परिवर्तित हो गया।

योगी का चमत्कार देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गए थे। सभी ने योगी को सिद्ध पुरुष मानकर सम्मान दिया एवं महात्मा मानकर उन्हें उच्चासन पर बिराजमान किया।

मेरे पिताजी ने योगी से कहा - महात्माजी ..... । हमें और चमत्कार दिखाइये।'

योगी ने कहा - 'राजन्..! यदि चमत्कार देखना हो तो इस केले के स्तम्भ को चीर दीजिए।'

उसी क्षण योगी का कथन स्वीकार कर राजाजी ने अपनी तीक्ष्ण तलवार के एक झटके से केले के स्तम्भ को चीर दिया।

केले के संख्यातीत दलों में से अचानक कौमलता की कविता के समान रूपवती नवयौवना प्रगट हुई। उस नवयौवना के मस्त रूप पर मेरे पिताजी सहित सभी सभासद मोहित हो गए।

मेरे पिताजी ने आतुर हो योगी से पूछा- 'हे महामुने:.....! यह सत्य है या इन्द्रजाल..... ?'

'राजन्.... । यह इन्द्रजाल नहीं है।' योगी ने कहा - यह सौन्दर्य की सरिता राजकुमारी मणीवेग की पुत्री रत्नमाला है। महाराजा मणीवेग मेरा भक्त है अत: उसने मेरे साथ उसकी पुत्री रत्नमाला को आपके साथ

शादी करने के लिए भेजी है। राजन् .... आप इसको स्वीकार करें।'

रत्नावती ने अम्बड़ से कहा- 'क्षत्रियवीर...! मेरे पिता उस रत्नमाला में आसक्त हो गए थे। वैसे भी रूपवती स्त्रियों को देखकर पुरूष उसमें आसक्त होते आया है। पिताजी को कन्या में आसक्त होते देख योगी भी अपना जाल बिछाने लगा।'

'राजन्.. यदि आप इस राजसुता के साथ विवाह करना चाहते हो तो आपको मेरी शर्त स्वीकारना होगी।'

'योगी....। इस राजकुमारी के साथ शादी करने के लिए एक क्या अनेक शर्त मैं स्वीकार करता हूँ।' राजा ने कहा

वासना का गुलाम व्यक्ति एक नहीं अनेक शर्त स्वीकारने को तैयार हो जाता है। क्योंकि वह वासना के सामने अन्धा हो जाता है। कहते है ना कि उल्लू को दिन में नहीं दिखाई देता तो कौए को रात में नहीं दिखाई देता किन्तु कामान्ध व्यक्ति को तो न रात को दिखाई देता है, न दिन को।

राजकुमारी ने कहा - 'मेरे पिताजी भी कामान्ध हो चुके थे अत: वे योगी की शर्त मानने को तैयार हो गए एवं योगी से पूछा'

'तुम्हारी क्या शर्त है योगी ?'

'राजन्.....। मैं एक महान साधना कर रहा हूँ।' योगी बोला - 'उसकी पूर्णाहुति आगामी कृष्ण चतुर्दशी को मध्यरात्रि में होगी। अत: आपको अपनी पुत्री रत्नावती के साथ श्रीपर्णा नदी के तट पर स्थित मेरे आश्रम पर आना होगा एवं उत्तर साधक बनना होगा।'

'मैं तैयार हूँ योगी।' पिताजी बोले यदि - 'मेरी सहायता से तुम्हारी साधना पूर्ण हो जाती है तो मैं रत्नावती के साथ तुम्हारे आश्रम पर आने को तैयार हूँ।'

योगी भी खुश होकर राजा से वचन लेकर अपने स्थान पर चला गया।

महामन्त्री ने पिताजी से कहा- 'नरनाथ.... ! यह योगी मुझे संदिग्ध लग रहा है। उसके वचन कपटपूर्ण है। आपने इसे स्वीकार कर स्वयं आफत मोल ले ली है। आपके जैसे संत पुरूष को प्रपंच में फसना कहाँ तक उचित है ?'

'मन्त्रीश्वर.... ! पिताजी ने कहा - 'मुझे वह कन्या बहुत पसन्द आ गई है अत: मैं उसके लिए सब कुछ करने को तैयार हूँ।'

महामंत्री ने सोचा अब राजा को कुछ कहने का कोई मतलब नहीं है अत: वे मौन हो गए।

कृष्ण चतुर्दशी की संध्या ढलने से पूर्व वह योगी आ धमका।

इतना कहकर राजकुमारी रत्नावती मारे भय के कांपने लगी। अम्बड़ क्षत्रिय ने पूछा - 'फिर क्या हुआ रत्नावती ...।'

साहस धारण कर राजकुमारी बोली - 'पिताजी तो उसके साथ जाने को तैयार थे अत: वे मुझे साथ लेकर योगी के साथ हो चले।'

रास्तें में से योगी ने सफेद और लाल रंग की छड़ी ले ली। जिसे देख मैं डरने लगी किन्तु पिताजी साथ होने से मुझमें हिम्मत थी।

योगी के साथ हम श्रीपर्णा नदी के तट पर आए। वहाँ पास में ही एक गुफा थी। अत: योगी के साथ गुफा में गए। गुफा का वातावरण भयानक था।

योगी ने वहाँ एक कुण्ड में अग्नि प्रज्वलित की एवं स्वयं होम करने लगा। पिताजी पर भी वह योगी मंत्रीत अक्षत डाल रहा था जिसके कारण पिताजी भी समझ चुके थे कि योगी दुष्ट है एवं हम उसकी जाल में फँस चुके है।

योगी ने मंत्र जाप पूर्ण किया एवं छडी उठाकर मुझे मार दी। मैं उसी क्षण मृगी बन गई।

इसे देख पिताजी ने कहा - 'योगी तुम यह क्या कर रहे हो ? तुमने मेरी पुत्री को मृगी क्यों बना डाली है ?'

योगी बोला- 'राजन् साधना में व्यवधान न करें। अभी मैं जैसा कहूँ वैसा ही करें अन्यथा अनर्थ हो जाएगा।'

पिताजी भी घबराए। योगी ने कहा - 'राजन् तुम ये मंत्रीत तीनों गोलियाँ यज्ञकुण्ड में डालकर मुझे प्रणाम करो।

पिताजी भी निसहाय थे अत: जैसे ही उन्होंने तीनों गोलियाँ अग्निकुण्ड में डाली कि योगी ने अपना असली रूप प्रकट किया।

वास्तव में तो वह योगी के वेश में नरपिशाच ही था क्योंकि जैसे ही पिताजी ने गोलियाँ डालकर योगी को प्रणाम किया कि योगी ने पिताजी को उठाकर उस अग्निकुण्ड में डाल दिया।

राजकन्या इतना कहकर फूट-फूट कर रोने लगी। वह आगे न बोल पाई। उसके अंग-अंग में भय फैल गया।

'हाँ फिर क्या हुआ रत्नावती ?'

अम्बड़ पातालपुरी में

राजकुमारी रत्नावती ने स्वस्थ होकर पुनः अपनी आत्मकथा सुनाना प्रारम्भ की ।

योगी ने जैसे ही पिताजी को यज्ञकुण्ड में डाला कि वे स्वर्ण पुरुष हो गए। जो यह मेरे पास रत्नकुण्डलधारी स्वर्ण पुरुष खड़े है ये मेरे ही पिताजी है ।

अच्छा तो योगी स्वर्ण पुरूष सिद्ध कर रहा था । अम्बड़ ने कहा - 'मैंने सुना है कि इस स्वर्ण पुरुष के हाथ पैर काटकर इसका स्वर्ण ले लेने पर दूसरे दिन पुनः स्वर्ण पुरूष अक्षत हो जाता है । जिसके पास यह स्वर्ण पुरूष होता है वह कभी भी दरिद्रता को नहीं पाता है ।

'हाँ फिर क्या हुआ ?'

रत्नावती बोली - 'उस दुष्ट नराधम ने पुनः मुझे लाल बेंत मारकर राजकुमारी बनाई एवं कामभोग की प्रार्थना की ।'

किन्तु मैंने कहा - 'तू नराधम है, पिताजी का हत्यारा है अतः मैं तेरे साथ विषय सुख कदापि नही भोगूंगी ।'

योगी ने मुझे समझाने पटाने के लिए हर सम्भव प्रयास किए किन्तु

मैंने उसे स्पष्ट कह दिया - 'मैं मरना श्रेष्ठ समझती हूँ किन्तु तेरे साथ मेरी काया मलिन करना नहीं चाहती। तू मुझसे दूर ही रहना।'

तब योगी ने पुनः मुझे श्वेत छड़ी मारकर मृगी बना दी और स्वर्ण जंजीर से बांधकर स्वर्ण पुरुष के साथ मुझे कुटिया में ले आया। कुटिया को नदी के प्रवाह में तैरती रखकर वह मेरी सेवा कर मुझे सन्तुष्ट करने का प्रयास करने लगा। उसकी भोग प्रार्थना प्रतिदिन चालू थी। मेरे द्वारा उसका रोज तिरस्कार भी होता था।

राजकुमारी रत्नावती ने कहा - 'इसके बाद क्या हुआ यह तो आप जानते ही हो ?'

'अच्छा तो इस सफेद छड़ी से मृगी बनाई जाती है एवं लाल छड़ी से पुनः राजकुमारी बनाई जाती है। ये दोनों मंत्रित छड़ी है।'

'हाँ ....।' राजकुमारी बोली - 'उस नरपिशाच का वध कर आपने मुझ पर अनन्त उपकार किया है अब मुझे अपनी रानी बनाकर मेरा स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करने की कृपा भी कीजिए।'

रत्नावती की व्यथापूर्ण कथा श्रवण कर अम्बड़ का दिल पिघल गया। उसने रत्नावती की प्रार्थना स्वीकार कर वही गांधर्व वेधि से रत्नावती के साथ विवाह कर लिया।

अम्बड़ ने कहा - 'हमे अभी ही बंगदेश की राजधानी भोजकटक नगर जाना चाहिए। अम्बड़ और रत्नावती आकाश मार्ग से भोजकटक नगर आए।

राजधानी को शत्रु सैन्य द्वारा घिरी देख रत्नावती ने कहा - 'प्राणेश .... ! पिताजी के अवसान का लाभ उठाकर ये शत्रु राजा सैन्य सहित यहाँ आ धमके है। हम समय पर आ गए है अन्यथा यह राज्य छिन्न भिन्न हो जाता। आप अपनी शक्ति का उपयोग कर इन शत्रु राजा और उनके

सैन्य को दण्डित करें।

अम्बड़ ने अपनी प्राण प्रिया रत्नावती की बात स्वीकार की तथा वीर सैनिक की तरह रथारूढ होकर जोर जोर से युद्ध भेरियाँ और नगाड़े बजवाए।

अम्बड़ रण मैदान में आ धमका। शत्रु सेना और अम्बड़ का भयानक युद्ध छिड़ गया। अम्बड़ ने घास की तरह शत्रु सैनिकों को काटना चालू किए।

अम्बड़ के पराक्रम के सामने भला कौन टिकने वाला था ? त्रस्त हो शत्रु सैन्य चारों दिशा में भाग गया। अम्बड़ ने फिर नगर में प्रवेश कर रत्नावती के भाइ समरसिंह का राज्याभिषेक किया ।

रत्नावती ने समरसिंह को सारी घटना कह सुनाई। रत्नावती की सारी बात सुनकर समरसिंह ने बहुत ही धूमधाम से अपनी बहन रत्नावती की शादी अम्बड़ नरपति के साथ कर दी।

अम्बड़ और रत्नावती... ।

दोनों एक दूसरे में खो गए। संसार के सुखों में मस्त बने दोनों का समय कैसे और कहाँ पसार हो रहा था यह पता नहीं चला।

एक मध्यरात्रि को अम्बड़ क्षत्रिय की नींद उचड गई। उसे योगिनी की आज्ञा याद आयी अत: वह उसी रात्रि को रत्नावती को छोड़कर कौडिन्य नगर के लिए चल पडा।

मध्यरात्रि बीत रही थी।

अम्बड़ कौडिन्य नगर के द्वार पर आया। उसने सोचा सोमेश्वर ब्राह्मण का घर कहाँ खोजना ? इतने में एक पुरुष वहाँ आया।

अम्बड़ ने उस पुरुष से पूछा - 'भय्या ... ! यहां सोमेश्वर ब्राह्मण कहाँ रहता है ?'

'इस नगर में सोमेश्वर नामक एक नहीं इक्कीस ब्राह्मण रहते है बोलों तुम्हें कौन से सोमेश्वर का घर बताऊँ ?'

अम्बड़ के पास इसका प्रत्युत्तर नहीं था। अत: वह चुप हो गया। उसने रात्रि किसी देवालय में निर्गमन करने का निश्चय किया।

पास ही में कामदेव का मन्दिर था। अम्बड उस मन्दिर के किसी एक कोने में जाकर लेट गया। किन्तु उसे नींद नहीं आ रही थी। उसे सोमेश्वर के ही विचार आ रहे थे।

अचानक उसके कर्णपट पर किसी के आने की आवाज सुनाई दी। अम्बड़ सावधान हो गया एवं कौन आता है और क्या होता है ? यह जानने के लिए तैयार हो गया।

अचानक कामदेव के मन्दिर में एक नवयौवना ने प्रवेश किया एवं मंदिर को निर्जन मान पास वाली स्त्री प्रतिमा के सामने जाकर खड़ी हो गई।

उसी क्षण नारी प्रतिमा मनुष्य की भाँति आवेश में आकर बोली 'अरे चन्द्रकांता..... आज तू इतनी देरी से क्यों आई ?'

'अरे सखी..! तू नाराज क्यों हो रही है ?'चन्द्रकांता ने कहा -'मेरे पिताजी सोमेश्वर को राजाजी ने किसी कार्यवश बुलाया था अत: वे रात्रि को बड़ी देर से आए। अत: मुझे यहाँ आने में देरी हो गई है।'

इसके बाद दोनों सखियाँ कामदेव की प्रतिमा के सम्मुख नृत्य करने लगी। कामदेव के सामने अनेक प्रकार के विनोद करती हुई दोनों बालाओं को देखकर अम्बड़ अपने आपको नहीं सम्भाल सका।

अचानक वह दोनों बालाओं के सामने प्रकट हो गया तो रंग में भंग हो गया। बालाओं से अम्बड़ ने पूछा - 'तुम कौन हो ?'

अचानक किसी के आगमन से दोनों सखियाँ मारे शर्म के लज्जित हो गई। उनके मुख शर्म से झुक गए। फिर भी अपनी लज्जा को समेट कर चन्द्रकान्ता बोली - 'हे सत्यपुरूष पहले तुम अपना परिचय दीजिए।'

'मेरा नाम पंचशीर्ष है।' अम्बड़ ने अपना परिचय छुपाते हुए कहा - 'मैं मुसाफिर हूँ।'

चन्द्रावती ने उसकी बातें सुनी अनसुनी कर दी एवं अपनी सखी से कहा- 'अगर तुम्हें आपत्ति न हो तो हम अपनी सखी वासवदत्ता के यहाँ चले।'

'चलना हो तो चलो किन्तु हमें पातालपुरी कौन ले जाएगाँ।' पुतली ने कहा - 'सारथी के बिना हम पातालपुरी कैसे जाएंगे ?'

'आज तक बिना सारथी के हमारा कार्य कब रूका है ? चन्द्रकांता बोली - 'यदि सारथी ही चाहिए तो यह पंचशीर्ष हमारा नया सारथी बनकर हमें पातालपुरी ले जाएगाँ।'

फिर अम्बड़ की तरफ पलट कर चन्द्रकांता बोली - 'क्यों पंचशीर्ष..! तुम हमारे सारथी बनकर हमें पातालपुरी ले जाओंगे ?'

चन्द्रकांता के स्वरों में मस्ती झलक रही थी। किन्तु अम्बड भी पराजित हो जाए इतना कमजोर नहीं था। उसने भी उत्तर दिया पाताल ही क्या यदि तुम कहो तो उसके भी पर तुम्हें मैं ले जा सकता हूँ।

दोनों सखियों ने कहा- 'तो चलिए फिर देर किस बात की है ?' और तीनों मन्दिर से बाहर आए। मन्दिर के बाहर बच्चों के खेलने की गाड़ी पड़ी थी उसमें दोनों सखियाँ बैठ गई और अम्बड़ से बोली- 'पंचशीर्ष.... गाड़ी चलाओ।

अम्बड़ ने इधर उधर देखकर कहा - 'बिना बैल के गाडी केसे चलाऊँ ?'

अम्बड़ की बात सुनकर दोनों सखियाँ ठहाके मार कर हँसने लगी।

अंबडराज ने पंचशीर्ष का रूप बनाकर बिना बैल की गाड़ी चलाते हुए
चन्द्रकांता को उसकी सखी के साथ पातालपुर पहुँचाया।

चंद्रकांता ने कहा - 'बैल वाली गाडी तो छोटे छोटे बच्चे भी चला लेते है। किन्तु बिना बैल के गाड़ी चलाने वाला ही कलाकार माना जाता है।'

अम्बड़ भी उन मस्तानी सखियों को पाठ पढ़ाना चाहता था अत: बोला-' बिना बैल के मैं गाड़ी नहीं चला सकता।'

चन्द्रकांता ने सगर्व कहा - 'तुम भी हमारे साथ बैठ जाओ। मैं तुम्हे बिना बैल की गाड़ी चलाकर बताती हूँ।'

अम्बड़ गाड़ी में आरूढ़ हो गया। और चन्द्रकांता गाड़ी चलाने का प्रयास करने लगी किन्तु गाड़ी एक कदम भी आगे नहीं बढ़ी तब अम्बड़ बोला - 'कहाँ गया तुम्हारा अभिमान... ? और कहाँ गई तुम्हारी विद्या ?'

दोनों सखियाँ इस पर समझ गई कि हमारी विद्या को निष्फल बनाने वाला यह कोई शक्तिशाली सिद्ध पुरूष है अत: दोनों सखियाँ गिडगिडा कर बोली - 'हे सत्यपुरुष.....। व्यर्थ हमें परेशान क्यों कर रहे हो।'

अम्बड़ ने कहा - 'किसी को परेशान करने का मेरा स्वभाव नहीं है किन्तु तुम्हारा गर्व तो उतारना ही था। अब तुम्हारी गाड़ी मैं तभी चलने दूंगा कि जब तुम मुझे बिना बैल की गाड़ी चलाने की विद्या सिखाओगी।'

चन्द्रकांता ने उसी क्षण अम्बड़ को वह विद्या सीखाई जिसके बल से बिना बैल की गाड़ी चलाई जा सकती है।

अम्बड़ भी वह विद्या सीखकर उनका सारथी बनकर उन्हें पातालपुर की और लेकर चल दिया।

अन्तिम आदेश

'यह नया पुरुष कौन है सखी.... ?' वासवदत्ता ने पूछा

'हमारा नूतन सारथी।' चन्द्रकांता ने संक्षिप्त उत्तर दिया ।

पातालपुरी पहुँचने पर उनकी सखी वासवदत्ता ने दोनों सखी सहित अम्बड़ का स्वागत किया। फल फलादि भेंट दिए जो कि चन्द्रकांता ने अम्बड़ की और बढ़ा दिए।

अब अम्बड़ ने सोचा - मुझे अपना कार्य करना चाहिए। क्योंकि इससे अच्छा समय दूसरा मिलने वाला नहीं है।

अम्बड ने पान के बीडे बनाए एवं भोजन के बाद चारों सखियों को पान के बीडे खाने को दिए। उस पान में अम्बड़ ने किसी फल का चूर्ण भी मिला दिया था।

जैसे ही सखियों ने पान चबाना प्रारम्भ किया कि अचानक वे चारों मृगी (हिरनी) बन गई। उसी क्षण अम्बड़ ने सोचा अब मेरा कार्य सरल हो गया है। उसने तत्काल सबेरा होने से पूर्व चन्द्रकांता को उसके घर ले जाकर छोड़ दिया।

जब सोमेश्वर पुरोहित को इस बात का पता चला की मेरी प्राणाधिक

इकलौती बेटी मृगी बन गई हैं तो वह उसे गोद में लेकर रुदन करने लगा।

महाराजा देवचन्द्र को इस बात का पता चला तो वे भी बडे चिन्तित हो उठे। तत्काल अपने सारे कार्य छोड़कर वे सोमेश्वर ब्राह्मण के घर की ओर चले।

इधर रास्ते में अम्बड़ बिना बैल की गाडी लेकर जा रहा था। जिसे देख राजा के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। राजा ने उस तेजस्वी सिद्ध पुरुष से कहा - 'हे सिद्धपुरुष.... तुम कौन हो ?'

'मैं विद्यासिद्ध अम्बड़ नरपति हूँ राजन्.....।'

'तुम वास्तव में सिद्ध पुरुष ही हो।' राजा देवचन्द्र ने कहा - 'अन्यथा बिना बैल की गाड़ी कैसे चला पाते ? आपको हम देव या विद्याधर मानते है। आप अतुल शक्ति के धारक हो। अत: कृपा कर हमारी आपत्ति में आप हमें मदद कीजिए।'

'मैं आपके किस काम आ सकता हूँ राजन्.....?'

राजा ने कहा - 'मेरे राजपुरोहित की पुत्री चन्द्रकांता को किसी ने मृगी बना दी है अत: आप उसे ठीक कर हमारी मदद कीजिए।'

'आप मुझे बताइये वह मृगी कहाँ है ?' अम्बड़ ने कहा - 'देखने पर ही मुझे पता चलेगा कि वह मुझसे साध्य है या नहीं।'

राजा देवचन्द्र अम्बड को लेकर सोमेश्वर पुरोहित के घर पर पहुँचे उन्होंने मृगी रूपी चन्द्रकांता को दिखाई एवं कहा - 'हे सत्यपुरुष.... ! तुम्हारे लिए क्या असाध्य है ?'

अम्बड़ ने कहा - 'राजन् यू तो इन बातों से मुझे कोई वास्ता नहीं है फिर भी मैं इसको ठीक कर सकता हूँ।'

'फिर देर किस बात की है सत्यपुरूष .. ? सोमेश्वर ने कहा - 'आप

जल्दी करें एवं मेरी पुत्री को पुन: उसके मूल रूप में ला दीजिए। मैं जीवन भर आपका ऋणी रहुँगा।'

'इसे मूल रूप में लाना दुसाध्य नहीं है।' अम्बड़ ने कहा - 'किन्तु उसके बदले मुझे क्या मिलेगा ?'

'तुम जो चाहोगे।' राजा ने कहा

फिर भी अम्बड़ ने कहा - 'सोमेश्वरजी के यहाँ जो सर्वार्थ सिद्ध नामक दण्ड है वह मुझे देना होगा।' अम्बड़ ने समय का लाभ उठाते हुए कहा।

राजा या पुरोहित के लिए इस समय कोई वस्तु अदेय नहीं थी। अत: उन्होंने कहा -'हम तुम्हें सर्वार्थ सिद्ध दण्ड दे देंगे। आप हमारा कार्य कीजिए।'

अम्बड़ ने अपनी लाल छडी निकाली और मृगी रूपधारी चन्द्रकांता की पीठ पर फटकारी।

सभी के देखते मानों चमत्कार हुआ और मृगी से पुन: चन्द्रकांता सबके बीच प्रकट हो गई।

राजपुरोहित के आनंद का ठिकाना न रहा तत्काल अपने गृह से सर्वार्थ सिद्ध दण्ड निकालकर अम्बड़ को प्रदान कर दिया। इतना ही नहीं, चन्द्रकांता के कहने से उसकी शादी भी अम्बड़ के साथ कर दी।

अम्बड़ क्षत्रिय चन्द्रकांता के साथ अनेक प्रकार के संसार के विषय सुख भोग कर समय व्यतीत करने लगा।

एक दिन की बात है।

चन्द्रकांता ने अम्बड़ से कहा - 'प्राणेश हम यहाँ आनंद लूट रहे है किन्तु पातालपुरी में मेरी अन्य तीनो सखियाँ मृगी का दु:खमय जीवन यापन कर रही है। उनका भी हमें उद्धार करना चाहिए।'

उसी क्षण चन्द्रकांता की बात स्वीकार कर अम्बड पातालपुरी गया।

वहाँ भी हडकम्प मची हुई थी अम्बड ने वासवदत्ता, नागश्री तथा पुत्तलिका का भी उद्धार किया उन्हें पुनः मनुष्य रूप बना दिया।

एक दिन अम्बड ने महाराजा देवचन्द्र की आज्ञा लेकर अपने नगर रथनुपुर जाने को प्रयाण किया। चन्द्रावती को लेकर वह सीधा बंगदेश की राजधानी भोजकटक नगर गए। वहाँ रत्नावती उसकी राह देखकर विरहमय जीवन यापन कर रही थी।

अम्बड ने उसे भी अपने साथ ले लिया तथा सीधा अपने नगर आया। नियमानुसार सीधा वह गौरख योगिनी के पास पहुँचा। योगिनी को प्रणाम कर सर्वार्थ सिद्ध दण्ड योगिनी को समर्पित करते हुए अपनी यात्रा का विवरण कह सुनाया।

योगिनी ने भी अम्बड़ को आशीर्वाद प्रदान किया। अम्बड़ अपने आप को कृत्य-कृत्य मानते हुए अपनी सभी प्रियाओं के साथ संसार के भोग सुखों को भोगने लगा।

समय सरिता की तरह प्रवाहित होने लगा।

एक दिन पुनः अम्बड़ गौरख योगिनी के चरणों में उपस्थित हुआ। योगिनी को प्रणाम कर उसने कहा - 'हे माते ....! मैंने आपके छह आदेशों का यथार्थता के साथ पालन कर दिखाया है अब केवल एक आदेश शेष है। अतः वह आदेश देकर मुझे कृतार्थ करें।

योगिनी बोली - 'दक्षिण दिशा में सोपारक नगर है । वहाँ के राजा का नाम चण्डीश्वर है। उसके मस्तक मुकुट में एक वस्त्र है वह लाकर मुझे दे दो।'

जैसी मातेश्वरी की आज्ञा।

अम्बड़ सोपारक नगर जाने को चला। रास्ते में श्रमित हो जाने के

कारण अम्बड़ ने आश्रय पाने के इरादे से एक घना वृक्ष खोज लिया। जब वह पेड़ के नीचे आया तो उसने देखा कि पेड़ अनेक फलों से सुशोभित है।

क्षुधा से पीडित अम्बड ने जैसे ही फल तोड़ने के लिए अपना हाथ बढ़ाया कि पेड की शाखा में छुपा हुआ कपि बन्दर बोला -

'हे सत्यपुरूष मैं फल तोडने से तुम्हें नहीं रोकता किन्तु फल तोड़ना तुम्हें बहुत महंगा पड़ जाएगा।'

'अरे वानर....। फल तोड़ने से क्या विपत्ति आ जाएंगी ?' अम्बड़ ने चिढ़कर कहा - 'तू फल न तोड़ने का कारण तो बता।'

बन्दर ने कहा - 'यह सब मैं आपको बाद में बताऊँगा। पहले मैं जो कहता हूँ वह सुनिए।'

'मेरे इस बाग से दक्षिण दिशा में तुम्बरगिरि नामक एक पर्वत है उस पर एक आमवृक्ष है। उसका एक फल तुम ले आओ फिर इस पेड़ से चाहे उतने फल तोड़कर खा लेना।'

अम्बड़ बन्दर की बात स्वीकार कर तुम्बरगिरि पर्वत पर गया। वहाँ आमवृक्ष अनेक फलों से लदा हुआ होने से भूमि पर झुक गया था। जैसे ही अम्बड़ ने आमफल तोड़ने के लिए हाथ बढ़ाया कि आमवृक्ष की शाखाएँ ऊपर हो गई। इस पर अम्बड़ को बहुत गुस्सा आया। उसने उसी क्षण छलाँग लगाई और वृक्ष पर जा बैठा।

अम्बड़ आगे कुछ सोचे इससे पूर्व वह आम्र वृक्ष आकाश में उड़ने लगा। आकाश मार्ग से वह तीव्र वेग से कहीं जा रहा था। अम्बड़ की समझ में नहीं आया कि आखिर यह सब क्या है ?

यूं तो अम्बड भी शक्तिशाली था। किन्तु आखिर यह मुझे कहाँ ले जा रहा है एवं वहाँ क्या है ? यह जानने की जिज्ञासा से अम्बड भी आकाश मार्ग से आम वृक्ष पर सवार होकर उड़ने लगा।

अंबडराज को उडाकर पेड़ नंदनवन ले गया वहाँ यज्ञ करते देख दिव्य पुरूष प्रकट हुआ एवं खिल-खिलाकर हँसने लगा।

आम वृक्ष नंदनवन में जाकर स्थिर हो गया तब अम्बड़ पेड़ से नीचे उतरा किन्तु यहाँ भी यह आश्चर्यमय जगत मानों अम्बड़ क्षत्रिय की प्रतीक्षा कर रहा था।

एक स्थान पर कुण्ड में अग्नि जल रही थी। तो दूसरी ओर मृदंग और वीणा के मधुर स्वरों से वातावरण गुंजायमान हो रहा था। अम्बड सोच ही रहा था कि यह सब क्या है ?

किन्तु इतने में अचानक वहाँ कोई दिव्य पुरुष आ धमका एवं अम्बड़ को देखकर खिल-खिला कर हँसने लगा। हँसते हँसते उसके मुँह से हा.... हा..हा..। वह बन्दर.... आम्रवृक्ष ..... कैसा तमाशा ? ये उद्‌गार निकल रहे थे।

अम्बड दिग्‌भ्रमित हो रहा था उसने दिव्यपुरूष से कहा - 'तुम चाहे उतना हँसिए किन्तु यह सब क्या है ? यह बताने की कृपा कीजिए।'

दिव्य पुरुष बोला - 'सावधान होकर सुनिए।'

पुरुष द्वारा पुत्रोत्पत्ति

अम्बड क्षत्रिय के मुखारविंद पर छाई गम्भीरता ने दिव्य पुरूष को पराजित कर दिया उसने कहा - 'मैं कौन हूँ ..... ? वह बन्दर कौन था ? वह आमवृक्ष क्या था ? ये नृत्य नाटकादि किसलिए हो रहे है ? यह सब तुम जानना चाहते हो ना ? तो ध्यानपूर्वक सुनिए।'

दिव्य पुरूष ने रहस्य से भरपूर उन बातों से पर्दा हटाते हुए कहा -

पातालपुरी में लक्ष्मीपुर नामक नगर है।

उस नगर में महा पराक्रमी और साहसी हंस नामक राजा राज्य करता है। वह हंस राजा मैं स्वयं ही हूँ। वह वानर आमवृक्ष का रूप धारण कर मैं ही तुम्हें यहाँ लाया हूँ।

'इस तरह मेरा अपहरण करने का कोई प्रयोजन ?' अम्बड़ ने आवेश में आकर पूछा।

'कारण के बिना कोई कार्य सम्भावित नहीं होते नरपति....। दिव्य पुरूष हंस राजा ने कहा -'तुम्हारा अपहरण करने का कारण भी मैं तुम्हें सुनाता हूँ। तुम सावधान होकर सुनो।'

पातालपुरी में शिवशंकर नामक नगर है। वहाँ का राजा भी शिवशंकर ही है। राजा न्यायी प्रजा प्रिय और भोला है। सब बातों से सुखी राजा के

सन्तान न होने से वह बड़ा दु:खी हो गया था।

उसके दु:ख में एक दिन उसकी रानी ने और वृद्धि कर दी। रानी ने कहा - प्राणेश पुत्र के बिना मेरा जीवन विष तुल्य हो गया है अत: आप कुछ भी करे एवं मुझें पुत्र की प्राप्ति हो एवं मेरे महल में स्वर्ण पलना बन्ध जाय।' रानी की बात सुनकर राजा दु:खी हो गया। वह रात दिन पुत्र की आकांक्षा करने लगा।

न उसे खाना भाता न उसे नींद आती परिणामत: राजा दिन प्रतिदिन सूखने लगा।

मन्त्रियों ने राजा से जब कारण जाना तो उन्होंने आश्वासन देते हुए कहा- 'राजन् आप तप जप करे। अवश्य ही आपकी मनोकामना पूर्ण होगी।'

राजा ने तप जप प्रारम्भ किए। किन्तु जहाँ भाग्य में ही निष्फलता लिखी हो वहाँ पुरुषार्थ कैसे सफल हो सकता था।

किन्तु एक दिन नगर में एक तपस्वी आए।

नाम था उनका विश्वदीपक..।

राजा ने उनकी खूब सेवा भक्ति की अत: विश्वदीपक ने प्रसन्न हो राजा को एक फल देते हुए कहा - 'यह फल तुम अपनी रानी के साथ बैठकर खा लेना। परिणामत: तुम्हें पुत्र की प्राप्ति होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

राजा के आनंद का ठिकाना नहीं रहा। उसे लगा मानो अब पुत्र प्राप्त हो ही गया। आनंद के अतिरेक में कहो या मूर्खतावश कहो, उस राजा को अपनी रानी के साथ बैठकर फल खाना था उसके बजाय अकेला ही वह फल खा गया।

तपस्वी के वचन मिथ्या कैसे हो सकते थे ? मन्त्र के सामने स्त्री-पुरूष का भेद नहीं होता है। कुछ ही दिनों के बाद राजा शिवशंकर को पेट में दर्द होने लगा।

असह्य दर्द होने पर वैद्यो को बुलाया गया। वैद्यो ने रोग का निदान करते हुए कहा - 'आश्चर्य की बात है कि राजाजी के पेट में गर्भ रहा है। वे एक पुत्र को जन्म देंगे।'

कर्म की गति कितनी न्यारी है। राजा हो या रंक कर्म सभी को परेशान करता है।

राजा शिवशंकर की स्थिति बडी लज्जास्पद हो गई। अब वह कही भी अपना मुँह दिखाने लायक न रहा। अब वह अपने घायलगृह रहकर समय निर्गमन करने लगा।

किन्तु उसके पेट में असह्य पीड़ा होने लगी। राजा उस दर्द के मारे तड़पने लगा। व्याधि शांत होने के बजाय दिन प्रतिदिन बढती रहने लगी। नगरजनों में इस समाचार के फैलने से सन्नाटा छा गया। सभी को विश्वास हो गया कि अब राजा दीर्घकाल तक जीवित नहीं रह सकता और सचमुच जब राजा को सातवाँ महीना जा रहा था तब मौत सिर्फ दो कदम ही दूर रह गई थी।

धीरे-धीरे यह दु:खदायी वार्ता विद्याधर आलम में फैल गई। उन्हें भी पुरूष के पेट में गर्भ रहने की बात सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने भी यह निर्णय लिया कि इस भोले राजा को संकट से बचाना चाहिए।

एक विद्याधर बोला - 'इस संकट से बचने का एक मात्र उपाय धरणेन्द्र देव की आराधना करना है।'

'किन्तु आज तो राजा की हालत इतनी अधिक खराब है कि वह धरणेन्द्र देव का स्मरण तक नहीं कर सकता।' दूसरा विद्याधर बोला - ऐसी अवस्था में धरणेन्द्र की आराधना कैसे सम्भव होगी ?'

उस समय शिवशंकर राजा का भाई वहाँ उपस्थित था। उसने कहा - 'मैं अपने भाई के लिए धरणेन्द्र देव की आराधना कर सकता हूँ।'

'बस फिर किसकी राह देख रहे हो ?' विद्याधरों ने कहा आज से ही आराधना प्रारम्भ कीजिए।

आराधना प्रारम्भ हुई । शुद्ध अन्तःकरण से की गई आराधना कभी निष्फल नहीं जाती है । सातवें दिन तो धरणेन्द्र देव का सिंहासन कम्पायमान हो उठा ।

अपने अवधिज्ञान से सिंहासन कम्पित होने का कारण जानकर धरणेन्द्र देव प्रत्यक्ष उपस्थित हुए । धरणेन्द्र ने पूछा - 'वत्स..! मेरी आराधना करने का क्या कारण है ?'

मेरे भाई की असहनीय पीड़ा दूर हो जाए यही आपकी आराधना का उद्देश्य है ।

तब धरणेन्द्र बोले - 'मैं भगवान पार्श्वनाथ का स्नात्र जल तुम्हें देता हूँ यह तुम्हारें भाई पर छिड़क देना । स्नात्र जल के प्रभाव से तुम्हारें भाई की पीड़ा दूर हो जाएगी ।'

इतना कहकर धरणेन्द्र देव ने स्नात्र जल लाकर दिया जिसके प्रभाव से शिवशंकर राजा की पीड़ा नष्ट हो गई एवं सर्वत्र शांति छा गई ।

समय व्यतीत होने लगा ।

नौ माह देखते देखते ही बीत गए और एक दिन राजा शिवशंकर ने सूर्य की तरह जगमगाते तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया किन्तु दुर्भाग्य कहो या कर्म कहो राजा शिवशंकर प्रसूति काल में ही परलोकवासी हो गया । वह अपने पुत्र को देखने के लिए इस दुनिया में विद्यमान न रहा ।

शिवशंकर राजा द्वारा जन्में पुत्र का नाम धरणेन्द्र चूड़ामणि रखा गया एवं उसे ही उसके पिता के राज्य पर धरणेन्द्र देव ने स्थापन किया । इतना ही नहीं उसके लालन पालन और रक्षण का भार भी उन्होंने ही स्वीकार लिया ।

जब धरणेन्द्र चुडामणी शैशव के श्रृंगार उतार कर किशोर एवं फिर युवा हुआ तब प्रसन्न होकर धरणेन्द्र देव ने चन्द्रकांतमणी वाला दिव्य सिंहासन भेंट दिया । इतना ही नहीं उन्होंने पातालपुरी भी बसाकर धरणेन्द्र चुडामणी को वहाँ का राजा घोषित किया ।

'किन्तु वह पातालपुर है कहाँ ?' अम्बड़ ने पूछा क्या तुम उसका रास्ता जानते हो ?

'हाँ नगरपति... ।' हंसराजा बोला - 'मैं भी पातालपुरी के लक्ष्मीपुर का राजा ही हूँ। यह अग्निकुण्ड जल रहा है इसी में से होकर पातालपुरी जाया जा सकता है ।'

हंसराजा ने कहा - 'धरणेन्द्र देव की महती कृपा के कारण हम सुख शांती से जीवन यापन करते है उन्होंने पातालपुरी में भगवान पार्श्वनाथ का जिनालय भी बनवाया है ।'

'तो धरणेन्द्र देव ने तुम पर बहुत कृपा की है ।' अम्बड़ ने कहा -

'हाँ राजन्... । जिनालय बनाकर धरणेन्द्र देव ने हम पर असीम कृपा की है। हंस राजा बोला - 'क्योंकि पातालपुरी में जो भी विघ्न आते है वे सभी भगवान पार्श्वनाथ की उपासना से शांत हो जाते है ।'

'तो तो पार्श्वनाथ भगवान की पूजा भी नियमित होती होगी ?' अम्बड़ ने पूछा

'हाँ अम्बड़राज.... ।' धरणेन्द्र देव ने पातालपुरी के समस्त नगरजनों एवं राजकर्ता परिवार को आज्ञा दे रखी है कि कोई भी विद्याधर सोलह वर्ष से बड़ी वय वाला पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन के बिना मुंह में कुछ भी नहीं खाएँगा एवं पर्व तिथि के दिन यदि किसी ने पूजन किए बिना अन्न जल ग्रहण कर लिया तो वह अपनी समस्त विद्याओं से भ्रष्ट हो जाएगा एवं महाभयंकर कुष्ठ रोगी होकर परलोक का पथिक बन जाएँगा ।

हंसराजा ने कहा - 'आज अष्टमी का दिन है अतः हम सभी विद्याधर मिलकर नृत्यगान करके भगवान पार्श्वनाथ की पूजा करने के लिए ही इकट्ठे हुए है ।'

'लेकिन हंसराजा ... । मुझे यहाँ अपहरण करके क्यों लाया गया है ?' अम्बड़ ने पूछा - 'आपने मेरे अपहरण का प्रयोजन तो बताया ही नहीं ।'

'आपका अपहरण नहीं बल्कि सम्मान सहित यहाँ लाया गया है।' हंसराजा बोले- 'आपको यहाँ क्यों लाया गया, अब वह भी आपको सुनाता हूँ।'

'दरअसल बात यूँ बनी है कि प्रमादवश धरणेन्द्र चूड़ामणी राजा ने पर्वतिथि के दिन प्रमादवश सेवा पूजा किए बिना भोजन कर लिया अत: वह अपनी सभी विद्याओं से भ्रष्ट होने के साथ साथ असाध्य कुष्ठ रोग से ग्रसित हो गया है।'

भयंकर यातना और पीड़ा से त्रस्त होकर एक दिन उस राजा ने धरणेन्द्र की आराधना की। सातवें दिन धरणेन्द्र प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने कहा -

'तुमने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया है उसी का यह परिणाम तुम भोग रहे हो। अब तुम्हें किसी भी प्रकार की सहायता करना मेरे लिए असम्भव है। कहा भी है -

आज्ञा भंगो नरेन्द्राणं, महतां मान खंडनम्।
मर्म वाक्यं च लोकानां, अशस्त्रो वध उच्चते।

राजा की आज्ञा को भंग करना, महापुरूषों का अपमान करना, या किसी व्यक्ति को मर्मवचन से आघात पहुँचाना, बिना शस्त्र से वध करने के तुल्य है।

इतना कहकर धरणेन्द्रदव अदृश्य हो गए।

धरणेन्द्रचूडामणी की पट्टरानी से अपने पति देव की वेदना सही न गई। उसने पुन: धरणेन्द्रदेव की उपासना की। सात दिन की साधना के बाद धरणेन्द्रदेव पुन: प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने कहा - 'देवी..! मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हुआ हूँ एवं तुम्हें तुम्हारे पतिदेव को दु:खमुक्त कराने का एक मात्र जो उपाय है वह बताता हूँ।'

हंसराजा कुछ क्षण रूक कर साँस लेने लगे तब अम्बड़ ने पूछा - 'फिर क्या उपाय बताय धरणेन्द्रदेव ने ?'

हंसराजा बोले -

'सोपारक नगर के निकट देवबह्मा नामक वाटिका में अभी अम्बड नरपति आया हुआ है वह महान पुण्यशाली साथ ही अनेक शक्ति का स्वामी सिद्ध पुरूष है यदि तुम उसे यहाँ ले आओ तो धरणेन्द्र चूडामणी राजा के सारे कष्ट मिट सकते है।'

हंसराजा ने कहा - 'हे अम्बड़राज... । तुम समझ ही गए होंगे कि हम तुम्हें यहाँ क्यों लाए है ? अब कृपाकर शिवशंकर नगर पधारकर हमारे मित्र राजा का कष्ट दूर करे।

परोपकार परायण अम्बड़ भी शिवशंकर नगर जा पहुचा। वहाँ भगवान पार्श्वनाथ का स्मरण कर उसने मन्त्रित जल धरणेन्द्र चूडामणी राजा पर छिटका और राजा सम्पूर्ण निरोगी हो गया । यत्र-तत्र-सर्वत्र आनंद का आन्दोलन छा गया।

धरणेन्द्र चूडामणी राजा ने पुत्री मदनमंजरी की शादी अम्बड़ के साथ धूम-धाम से की एवं धरणेन्द्रदेव द्वारा प्रदत्त चन्द्रकांतमणी बाला वह दिव्य सिंहासन अपने पर किए उपकार के बदले में भेंट दिया।

अम्बड और मदनमंजरी ... ।

संसार सुखों का आनंद लूटते हुए समय गुजारने लगे।

एक दिन अम्बड़ को गोरख योगिनी का आदेश याद आया। अत: वह अपनी प्रिया मदनमंजरी को साथ लेकर योगिनी के आदेश की पूर्ति हेतु सोपारक नगर जाने के लिए चल दिया क्योंकि योगिनी का सातवाँ और आखरी आदेश पूर्ण होना था।

धनभण्डार की प्राप्ति

बसन्त ऋतु का आगमन हो चुका था। उपवन सोलह कला खिल उठे थे। रसिकजन के मन आनन्द से झूम रहे थे। उद्यान मानवों से उभरा रहे थे।

अम्बड़ क्षत्रिय भी गोरख योगिनी के अन्तिम आदेश का पालन करने सोपारक नगर के उद्यान में आया, उसने योगी का रूप बनाकर उपवन में अपना अड्डा जमाया।

आकर्षणी विद्या द्वारा अम्बड़ योगी ने लोगों को अपनी तरफ आकर्षित करने का प्रयास किया।

उन दिनों बसन्त ऋतु का आनन्द लूटने के लिए सोपारक नरेश चण्डीश्वर की पुत्री सुरसुन्दरी भी अपनी सखियों के साथ वार्ताविनोद करती हुई उपवन में आई।

अम्बड़ योगी ने अपनी मोहिनी विद्या का प्रयोग किया। अत: राजकुमारी योगी पर मोहित हो गई। अम्बड़ वैसे भी था तो सौन्दर्य का सागर और फिर मोहिनी विद्या का प्रयोग हुआ तो अब बाकी क्या रहा ?

राजकुमारी के मन अम्बड़ योगी उसके स्वप्न का राजकुमार बन गया। एकटकी लगाकर वह योगी को देखने लगी। अनायास ही वह योगी पर मोहित हो उठी।

अम्बड़ योगी ने राजकुमारी को मन्त्रित भस्म दी, जिसे राजसुता ने

ग्रहण की एवं सखियों के आग्रह पर अपने अन्तपुर में आई।

महाराजा चण्डीश्वर को जब राजकुमारी की सखियों द्वारा पता चला कि राजकुमारी किसी योगी को चाहने लगी हैं तब राजा को योगी पर बड़ा क्रोध आया। जरूर यह कोई दुष्ट योगी होना चाहिए एवं मेरी कबूतरी जैसी भोली पुत्री को फँसाकर ले जाने का वह षड़यंत्र कर रहा होगा।

राजा का सत्तावाही स्वर गूँजा - 'जाओ सैनिकों ...! उस दुष्ट योगी को बन्दी बनाकर मेरे सामने उपस्थित करो।'

'जैसी राजन् की आज्ञा ...!'

सैनिक उपवन में पहुँचे। अम्बड़ समझ गया कि ये मुझे बन्दी बनाकर ले जाने के लिए यहाँ आए हैं, अत: अम्बड़ ने उसी समय मोहिनी विद्या का स्मरण किया।

अम्बड़ की विद्या के प्रयोग से सभी सैनिक विद्यार्थी की तरह अम्बड़ के पास जाकर बैठ गए।

राजा चण्डीश्वर को जब इस बात का पता चला तो उन्होंने सेनापति को सैन्य लेकर योगी को पकड़ने भेजा।

सेनापति को आते देख अम्बड़ ने रौद्र मंत्रों का उच्चार किया और सेनापति भयभीत हो वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया। सीधे राजा के पास जाकर ही उसने साँस ली।

योगी का इतना उत्पात देखकर राजा स्वयं उपवन में आया एवं धनुष पर तीर चढ़ाकर योगी पर छोड़ा किन्तु अम्बड़ ने तीर को रास्ते में ही स्तम्भित कर दिया।

यह देख राजा विचार में पड़ गया। यह योगी किसी देव-दानव या विद्याधर से कम नहीं हैं अन्यथा ऐसा सामर्थ्य कैसे हो सकता है ?

राजा आगे कुछ सोचें इससे पूर्व तो अम्बड़ ने विद्या से राजा को वही रोक दिया। इससे राजा पुतले की तरह वहाँ स्थिर हो गए।

अम्बड़ ने भी योगिनी के आदेशानुसार राजा के मुकुट में रखे हुए वस्त्र को निकालकर अपने पास रख लिया।

राजा जड़ होकर पुतले की तरह खड़े हैं, इस समाचार ने पूरे नगर में हड़कम्प मचा दी। राजकुमारी सुरसुन्दरी को जब इस बात का पता चला तब वह वहाँ दौड़ आई एवं नम्र स्वरों में योगी से प्रार्थना करने लगी -

-'हे सत्पुरुष ...! पिताजी का अपराध क्षमा कीजिए एवं पिताजी को बन्धन से मुक्त करिए।'

राजकुमारी की प्रार्थना से योगी ने राजा को विद्या से मुक्त किया। राजा को अपने अपराध का ख्याल आया। मैं, जिसे पाखण्डी मान रहा था, वह तो कोई सिद्ध पुरुष है, अत: राजा ने अपने अपराध के लिए क्षमा माँगी।

'सिद्ध पुरुष ...! मेरा अपराध क्षमा कर अपने पराक्रम की तरह अपना सही स्वरूप भी हमारे समक्ष पेश करने की कृपा कीजिए।'

राजा की प्रार्थना पर अम्बड़ ने अपना सही स्वरूप प्रगट किया।

अम्बड़ का अद्‌भुत रूप सौन्दर्य देखकर राजा तथा प्रजा आनन्दित हो उठे। उसी समय सोपारक नरेश चण्डीश्वर ने अपनी पुत्री सुरसुन्दरी की शादी अम्बड़ के साथ कर दी।

अम्बड़ भी कुछ दिन आनन्द प्रमोद में समय यापन कर अपने नगर रथनुपुर आया तथा योगिनी के चरणों में नतमस्तक हो वह वस्त्र प्रस्तुत करते हुए बोला -

'हे माते ...! मैंने तेरे सातों आदेश का पालन कर दिखाया है, अब मेरे लिए क्या आदेश हैं ?'

'मैं तुझ पर सन्तुष्ट हूँ अम्बड़...!' गोरख योगिनी बोली-'तुझे धन्यवाद है। तू वीर है ... धीर है ...और गम्भीर भी है। अब तू निश्चिंत होकर पुण्योदय से प्राप्त लक्ष्मी का उपभोग कर जीवन का आनन्द लूट।'

अम्बड़ क्षत्रिय ने भी गोरख योगिनी का आशीर्वाद अपने सिर पर चढ़ाकर संसार के सुख भोगने लगा।

वाचकों को याद होगा कि प्रकरण प्रथम में अम्बड़ क्षत्रिय का पुत्र कुरुबक ने महाराजा विक्रम सिंह के दरबार में आकर अपने पिता का जीवन वृत्तांत सुनाना प्रारम्भ किया था। उसी अम्बड़ पुत्र कुरुबक ने राजा विक्रमसिंह से कहा -

'हे राजन् ...! मेरे पिताजी अम्बड़ नरपति अपनी बत्तीस-बत्तीस रानियों के साथ रहकर संसार के इच्छित सुखों को भोग रहे थे। विशाल राज्य का संचालन भी उन्होंने सफलता से किया। अनेक राजा-महाराजा उनके चरणों की सेवा करने के लिए तत्पर रहते थे।

इतना सब होने के बाद भी मेरे पिता अम्बड़राज प्रतिदिन गोरख योगिनी को प्रणाम करने अवश्य जाते थे।

'राजन्...! मेरी माता का नाम चन्द्रावती था और जब मैं मात्र आठ वर्ष का था तब एक अजब-गजब की घटना बन गई जो मैं आज तक नहीं भूला हूँ।' कुरूबक बोला -

'वह अजब-गजब घटना क्या थी ?' राजा विक्रमसिंह ने पूछा।

अम्बड़पुत्र कुरुबक ने कहा -'एक दिन मैं पिताजी के साथ गोरख योगिनी को प्रणाम करने गया था। तब योगिनी ने मेरे पिताजी से कहा -'हे विद्या सिद्ध अम्बड़ ...! मैं तेरी भक्ति से खूब ही प्रसन्न हूँ और आज मैं तुझे राजा हरिशचन्द्र का धनभण्डार बताने जा रही हूँ।'

'आज तक आपकी बहुत कृपा हुई है, माताजी ...!' पिताजी अम्बड़राज बोले।

योगिनी ने अपनी ध्यान कुण्डली के नीचे रहा धन भण्डार दिखाते हुए कहा - 'हे विद्यासिद्ध नरपति...! यह धन भण्डार मैं तुझे समर्पित करती हूँ।'

अंबडराज कुरूबक के साथ योगिनी के पास गया तब प्रसन्न हो योगिनी ने उसे अपनी ध्यान कुण्डली के नीचे रहा धन भण्डार दिखाकर अर्पण किया।

अम्बड़ पुत्र कुरुबक बोला- 'मैंने और पिताजी ने वह धनभण्डार देखा जो कि स्वर्ण...रत्न...मणि...माणक से भरा पड़ा था। उस पर बैताल सतत् पहरा देता था उसने भी प्रसन्न हो वह धन भण्डार मेरे पिता को समर्पित किया।

इसके बाद पिताजी ने उस भण्डार में वह स्वर्णपुरुष स्थापित किया जो उन्हें बंगदेश की राजकुमारी के साथ प्राप्त हुआ था। साथ ही धरणेन्द्र चूड़ामणी राजा द्वारा प्रदत्त वह रत्नमय सिंहासन भी उसी भण्डार में रख दिया गया।

समय-समय का कार्य करते ही रहता है। सर्वभक्षी काल के पंजे से आज तक कौन छूट सका हैं ?

एक दिन अचानक गोरख योगिनी का अवसान हो गया। इस घटना से मेरे पिताजी को बड़ा आघात लगा। वे सदा उदास और निराश रहने लगे। यहाँ तक की सर्वथा अनाथ की तरह उन्होंने संसार के सभी सुखों को त्याग कर दिया।

एक दिन की बात है।

मेरे पिताजी को मेरी माता चन्द्रावती ने कहा -'नाथ ...! आप हमारे साथ उद्यान में पधारो एवं अपनी हताशा-निराशा को छोड़कर हमारे साथ आनंद प्रमोद के साथ रहो।'

अम्बड़राज ने भी उनकी बात स्वीकार ली और अपनी बत्तीस रानियों के साथ वन में क्रीड़ा करने चल पड़े। यूँ तो उनकी संसारिक आसक्ति दूर हो गई थी। वे तो मात्र मन को शांत करने ही वन में आए थे।

अचानक वन में उन्होंने वृक्ष के नीचे सौन्दर्य के सागर जैसे रूपवान श्वेत वस्त्र धारी युवा मुनिवर को देखें। वह सोच में पड़ गए। 'आखिर ये मुनिवर कौन है ?'

लई जा जो सन्देश प्रवासी रे

'प्रभु ...! आपका नाम ...?'

'मेरा नाम केशी कुमार श्रमण है।'

'आप किनके शिष्य है प्रभु ...!'

'मैं पार्श्वनाथ भगवान की शिष्य परम्परा का श्रमण हूँ। लोग मुझे पार्श्वापत्य के नाम से भी जानते है।'

'मैं आपके दर्शन से धन्य हो गया प्रभु ...!'

'तुम्हारा नाम क्या है भाग्यशाली ...?'

'आपने अम्बड़ क्षत्रिय का नाम तो सुना ही होगा ?'

'हाँ ...! पराक्रमी अम्बड़ के नाम से कौन अपरिचित होगा ? सारे विश्व के लोगों की जिह्वा पर उसका नाम परिचितों की तरह घूमता हैं।'

'मैं वहीं अम्बड़ क्षत्रिय हूँ।'

मुनिवर ने अम्बड़ क्षत्रिय के व्यवहार से ही समझ लिया कि यह पराक्रमी होने के साथ-साथ पवित्र भी है। अतः उन्होंने अम्बड़ को धर्मोपदेश दिया।

केशीकुमार श्रमण ने जैसे ही उपदेश पूर्ण किया कि अम्बड़ ने जिज्ञासा व्यक्त की -'प्रभु ...! आपने जो उपदेश दिया उसके अनुसार जैन धर्म अत्यन्त उपकारी है, किन्तु क्या शैव धर्म उतना उपकारक एवं कल्याणकारी नहीं हैं ?'

'कुएँ में रहकर जीवन निर्वाह करने वाला मेंढक सारा ही विश्व उस कुएँ में समाया हुआ मानता है।' केशीकुमार बोले -'अभी तक तुमने मात्र शैव धर्म ही जाना-पहचाना है। अतः तुम्हें वहीं उपकारक लगता है। इसके सामने तुम जैन धर्म से बिलकुल अपरिचित हो। अतः ऐसी शंका होना भी स्वाभाविक है।'

केशीकुमार श्रमण ने कहा -'जिस व्यक्ति ने कभी भी घी नहीं खाया हो उसे तेल भी अमृत समान लगता हैं। तेरी भी ऐसी ही स्थिति है। तू अवकाश पाकर जैन धर्म को समझने का प्रयास करेगा तो तुझे स्वयं को निर्णय करने का अवसर प्राप्त होगा।'

'प्रभु ...! मैं आज ही अवकाश लेकर आया हूँ।' अम्बड़ ने कहा - 'आप मुझे तत्व बताइये।'

'जैन धर्म में मुख्यतया तीन तत्व बताए है।' केशीकुमार श्रमण ने कहा - 'देव, गुरु और धर्म।'

'जिन्होंने राग-द्वेष पर विजय प्राप्त की हो वह देव है।' केशीकुमार ने देवतत्व की व्याख्या समझाते हुए कहा -'चाहे वह ब्रह्मा हो, विष्णु हो, महेश हो या अन्य कोई भी क्यों न हो।'

'प्रभु...! जैन धर्म में देवतत्व की व्याख्या तो बहुत विशाल और उदार है। गुरुतत्व की व्याख्या क्या है ?'

'कंचन-कामिनी के त्यागी, पंचमहाव्रत के धारक, जिनाज्ञा के पालक साधु सुगुरु है।'

'और सुधर्म ...?'

'जिन्होंने अज्ञान के अन्धकार को दूर कर, पूर्ण प्रकाश स्वरुप ज्ञ प्राप्त किया हो ऐसे केवली भगवन्तों द्वारा कथित धर्म सुधर्म हैं।'

'कितनी सुन्दर व्याख्या बताई आपने।' अम्बड़ बोला - 'प्रभु.., जैन धर्म ग्रहण करना चाहता हूँ।'

केशीकुमार श्रमण ने अम्बड़ को बारह व्रतों का स्वरूप समझाया ए सम्यक्त्व सहित बारह व्रत प्रदान कर अम्बड़ को जैन बनाया।

सम्यक्त्व सहित व्रत नियमों को ग्रहण कर जब अम्बड़ अपने घ आया तब अम्बड़ के पूर्व परिचित शैवमत के संन्यासी को इस बात क पता चला।

वह उसी समय रथनुपुर आया एवं उसे शैवमत का उपदेश दिया परिणामतः अम्बड़ पुनः श्रद्धाभ्रष्ट हो गया एवं उसने परिव्राजक धर्म स्वीका लिया।

कुछ दिन बीतने पर पुनः वह जैन मुनि के सम्पर्क में आया। अतः पुनः जैन सिद्धान्त के धर्मोपदेश श्रवण कर जैन धर्म पर अनुराग उत्पन्न हो गया एवं जैन धर्म स्वीकार लिया।

इस तरह अम्बड़राज का जीवन धर्म के विषय में चलायमान होते रहा। कभी वह परिव्राजक बन जाता तो कभी वह जैन श्रावक बन जाता।

ऐसा तो अठारह बार उसने धर्म परिवर्तन किया। वह किसी भी धर्म में स्थिर न हो सका। अन्त में वह परिव्राजक का धर्म कर रहा था। तब अचानक उसने नगरजनों को उद्यान की तरफ जाते हुए देखकर सेवक से पूछा -'ये नगरजन कहाँ जा रहे हैं ?'

सेवक ने कहा -'स्वामिन्...! पतित पावन, विश्व विभु वात्सल्य सिन्धु, श्रमण भगवान महावीर देव उद्यान में पधारे हैं। ये नगरजन उनके दर्शन वंदन करने जा रहे हैं।'

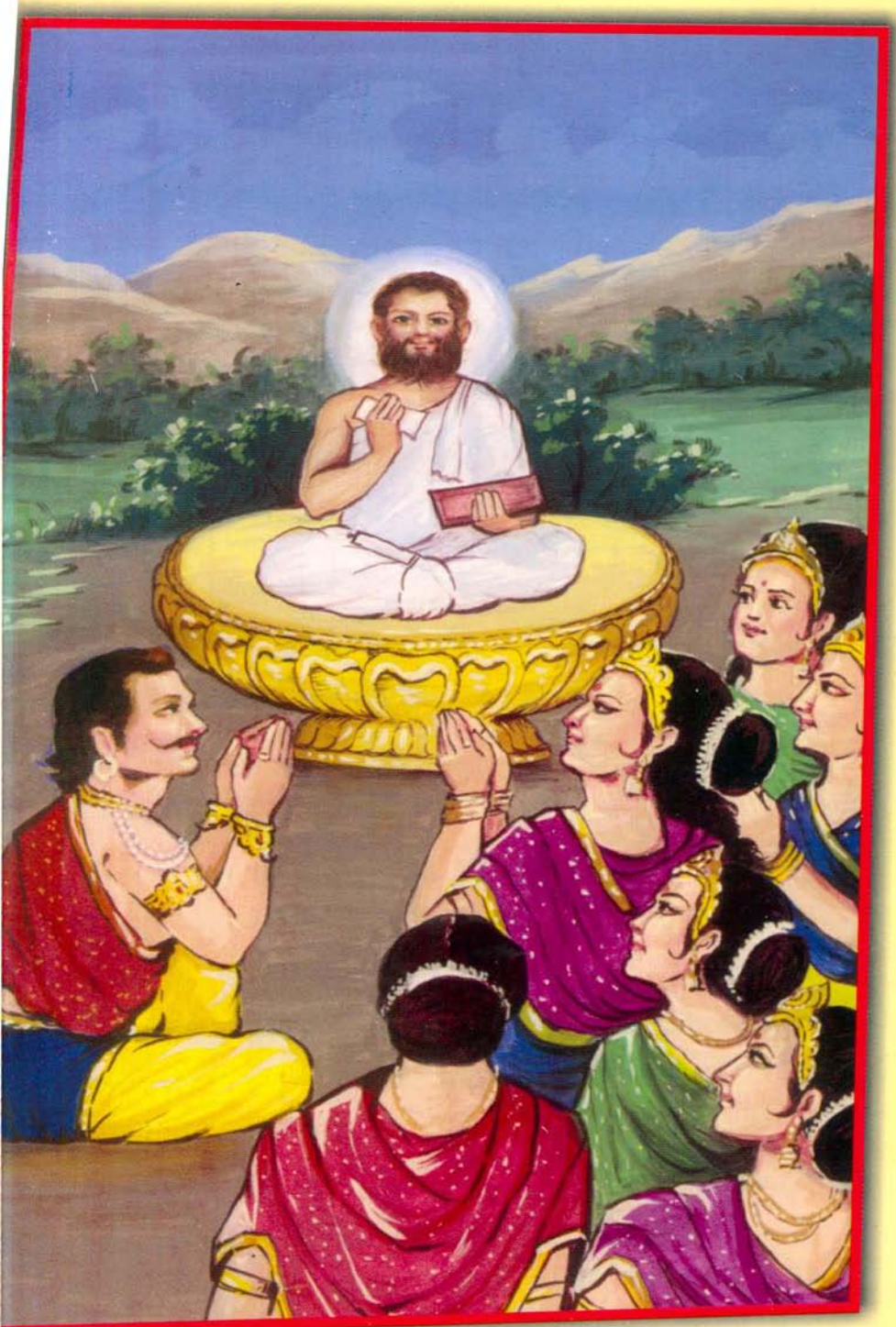

श्वावत्य केशीकुमार श्रमण से उपदेशित हो अंबडराज ने अपनी बत्तीस पत्नियों के साथ जैन धर्म ग्रहण किया।

जैनों में चौबीस तीर्थंकर माने गए हैं। उनमें ये चौबीस में तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी पधारें हैं अत: अब इनके पास जाकर मेरे मन के सभी संशय दूर कर धर्म में स्थिर बनूँ।

अम्बड़ परिव्राजक भगवान के समवसरण में आए। भगवान वर्धमान की दिव्य देशना श्रवण की और मिथ्यात्व भाग गया। अन्तर में सम्यक्त्व का प्रकाश फैल उठा। जिनेश्वर देव के धर्म में उसे दृढ़ श्रद्धा हो गई, उसने जैन धर्म का स्वीकार किया।

प्रतिदिन वह वीर प्रभु की वाणी श्रवण कर अपनी श्रद्धा को दृढ़ करने लगा।

एक दिन एकान्त पाकर अम्बड़ ने प्रभु से पूछा - 'प्रभु ...! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ ?'

प्रभु ने कहा - 'तुम क्या पूछना चाहते हो वह मैं जानता हूँ, किन्तु फिर भी पूछो तुम क्या चाहते हो ?'

'प्रभु...!' अम्बड़ बोला - 'आपकी तरह मेरी मुक्ति होगी या नहीं ? यदि होगी तो कब होगी देवाधिदेव ...?'

'अम्बड़ ...! तू महान पुण्यशाली है।' प्रभु महावीर ने कहा - 'तू मेरी ही तरह आगामी उत्सर्पिणी काल में देवार्थकृत नामक बाइसवाँ तीर्थंकर होगा।'

अम्बड़ के आनंद का पार न रहा। मैं तीर्थंकर बनकर स्वयं के कल्याण के साथ संसार मात्र के जीवों को मोक्ष सुखों का भोक्ता बनाने में निमित्त बनूँगा। धन्य भाग है, मेरा।

अम्बड़ ने प्रभु के चरणों में पुन: नमन किया एवं बोला - 'कृपासागर प्रभु...! आप मेरी वंदना प्रतिदिन स्वीकारियेगा। आज मैं कार्यवशात् राजगृही जा रहा हूँ। आपको कोई कार्य हो तो बताइए देवाधिदेव ...!'

अम्बड़ क्षत्रिय के सम्यक्त्व को दृढ़करने के इरादे से प्रभु महावीर

बोले -'राजगृही में मेरी एक सुश्राविका रहती है, नाम उसका सुलसाश्राविका है, उसे तू धर्मलाभ कहना।'

'कौन है, यह सुलसाश्राविका। जिसे स्वयं भगवान महावीर धर्मलाभ का सन्देश भिजवा रहे हैं। अम्बड़ ने सोचा।

'क्या कोई राजरानी है प्रभु ...!' सुलसा श्राविका

'नहीं अम्बड़ ...!'

'तो क्या कोई सेठ-श्रीमन्त है प्रभु...?'

'नहीं अम्बड़ ...!'

'तो फिर है कौन ...?'

'नाग सारथी की पत्नी है, सुलसा, अम्बड़ ...!' प्रभु ने कहा -'एक सामान्य सारथी की पत्नी।'

'ठीक है देवाधिदेव ...!' अम्बड़ ने कहा -'आपका सन्देश मैं पहुँचा दूँगा।'

अम्बड़ राजगृही के मार्ग पर आगे बढ़ने लगा किन्तु उसके मन में द्वन्द छिड़ गया। राजरानी नहीं, सेठ-श्रीमन्त नहीं मात्र सारथी की पत्नी को प्रभु ने धर्मलाभ का सन्देश भेजा। क्या विशेषता है, उस सुलसा श्राविका में ?

अम्बड़ ने मनोमन दृढ़ संकल्प किया। पहले मैं सुलसा की परीक्षा करूँगा। फिर धर्मलाभ की बात।

अम्बड़ ने रास्ते भर यही सोचा। उसने सुलसा को कसौटी पर कसने का निर्णय ले लिया था और मनोमन योजना भी बना ली थी।

अम्बड़ एक दिन राजगृही पहुँच गया। उसने अपने सारे कार्य छोड़कर श्राविका सुलसा की कसौटी करने के लिए अपनी विद्या से जैन मुनि का वेश बना लिया।

सीधा वह सुलसा के गृहांगन में जा पहुँचा मुनिवेशधारी अम्बड़ ...!

'धर्मलाभ ...!'

श्राविका सुलसा के आनन्द का पार न रहा। मेरे गृहांगन में मुनिराज ? अहोभाग्य ...!

'पधारों प्रभु ...! पधारों ...!' सुलसा भाव विभोर हो बोली - 'महती कृपा हुई आपकी।'

'सुलसा श्राविका ...!' मुनिवेशधारी अम्बड़ बोला - 'तुम्हारें यहाँ लक्षपाक तेल है क्या ?'

'हाँ प्रभु ...!' सुलसा ने कहा - 'आवश्यकता हो तो मुझे लाभ दीजिए। ऐसा मेरा कहाँ भाग्य कि मेरा आहार मुनिराज के पात्र में पड़े।'

सुलसा श्राविका लक्षपाक तेल अन्दर से निकाल लायी। लक्षपाक तेल ...! जिसे लाखबार पकाकर तैयार किया हो। बहुत महँगा होता है लक्षपाक तेल।

सुलसा ने भावपूर्वक लक्षपाक तेल व्होराया। किन्तु साधु ने वह पात्र जानबूझकर ढोल दिया और बोले 'अरे... अरे ... यह क्या हुआ ...? यह तेल ढुल गया।

श्राविका सुलसा ने उसी चढ़ते भाव से पुनः तेल लाकर मुनिवर को व्होराया।

अम्बड़ उसके मनोगत भाव का अध्ययन करने लगा। परिणाम तो चढ़ते हैं।

साधु न माँगे ऐसी वस्तु माँग बैठा साधुवेशधारी अम्बड़। सुलसा समझ गई यह साधु नहीं ठग है कोई। जहाँ साधुता नहीं है, वहाँ भक्ति कैसी ?

सुलसा फिर वहाँ नहीं दिखाई दी। वह गृह के अन्दर के भाग में

अदृश्य हो गयी।

अम्बड़ लज्जित हो गया किन्तु उसने सोचा अभी मैं दूसरी कसौटी पर कसूँगा सुलसा को।

अम्बड़ सबेरा होने की राह देखने लगा।

प्रातःकाल का समय था।

पूर्वाकाश में सूर्य रश्मियाँ जगमगा रही थी। विहंगवृंद के आवागमन से गगन मण्डल व्याप्त था। मन्द-मन्द समीर की लहरिया वातावरण को शांत-प्रशान्त और मनमोहक बना रही थी।

आज सबेरे से ही राजगृही नगरी के प्रजाजन उपवन की ओर जाते हुए दृष्टिगोचर हो रहे थे। हजारों की तादाद् में नगरजन उमंग और उत्साह से उपवन में पधारें ब्रह्माजी के दर्शन को जाने के लिए अग्रेसर थे।

महाश्राविका सुलसा उस समय जिनेश्वरदेव का पूजन करने जा रही थी। उसे देख एक श्रेष्ठि ने कहा - 'अरे श्रमणोपासिका ...! आज तो तुम्हें हमारे साथ चलना चाहिए, क्योंकि साक्षात् ब्रह्माजी नगर के पूर्व द्वार पर पधारे हैं। वहाँ चलकर तुम्हें उनकी पूजा स्तवन करके जीवन सफल बनाना चाहिए।'

'अरे भले-भोले नगरजनों ...!' महाश्राविका बोली -'आत्मा का कल्याण सिर्फ वीतरागदेव के सद्धर्म से ही सम्भव है। मैं सिर्फ अरिहन्त भगवान के चरणों में ही अपना मस्तक झुकाती हूँ। अन्य देवी देवता के लिए मेरे हृदय में तारक भाव नहीं हैं।' सुलसा ने नगरजनों को स्पष्ट शब्दों में कह दिया।

इससे एक युवा चिढ़ गया। वह बोला - 'अरे चलो... चलो...! यह तो महावीर के पीछे पागल हैं। इससे माथा फोड़ी करके व्यर्थ समय गंवाना कौन-सी बुद्धिमत्ता हैं ?'

राजग्रही जाकर अम्बड़ परिव्राजक ने ब्रम्हा–विष्णु–महेश एवं तीर्थंकर का रूप बनाकर सुलसा श्राविका की श्रद्धा की परीक्षा ली।

राजगृही नगर में सर्वत्र ब्रह्माजी के आगमन के समाचार फैल चुके थे। परिणामत: हजारों नगरजन पूर्वद्वार पर ब्रह्माजी के दर्शन कर अपने आपको धन्य मान रहे थे।

किन्तु ब्रह्माजी स्वयं उस भीड़ में महाश्राविका सुलसा को ढूँढ रहे थे उनकी आँखें यही इन्तजार करती रही कि सुलसा आई या नहीं ?

अन्त में जब उन्हें निराश होना पड़ा तो उन्होंने अपनी सारी माया समेट ली एवं अदृश्य हो गए।

प्रिय वाचकों ...!

वह ब्रह्माजी अन्य कोई नहीं बल्कि सुलसा श्राविका की परीक्षा करने वाले अम्बड़ परिव्राजक ही थे।

दूसरे दिन अम्बड़ ने दक्षिण दिशा के द्वार पर विष्णु का रूप बनाकर आसन जमाया। नगर के हजारों नर-नारियों ने भगवान समझकर विष्णु के दर्शन कर अपने आपको कृत्य-कृत्य माना किन्तु संध्या तक भी सुलसा श्राविका नहीं आई।

तीसरे दिन नगरी के पश्चिम द्वार पर अम्बड़ ने शंकरजी का रूप बनाकर सुलसा श्राविका को अपनी तरफ आकर्षित करने का प्रयास किया। किन्तु उसमें भी उसे सफलता हासिल नहीं हुई।

अपनी विद्याशक्तियों से विविध रूप बनाने में भी जब अम्बड़ को सफलता नहीं मिली तब उसे अहसास हो गया कि श्राविका सुलसा जिनेश्वर देव द्वारा कथित धर्म में ही श्रद्धा विश्वास रखती है। किन्तु मुझे एक परीक्षा और करनी चाहिए। यदि मैं तीर्थंकर का रूप बनाकर मायाजाल बिछा दूँ तो अवश्य ही सुलसा उसमें फँस जायेगी।

अम्बड़ ने पाँचवें दिन नगरी के उत्तर द्वार पर अपनी अमाप विद्याशक्ति से समवसरण की रचना की एवं स्वयं चतुर्मुख जिनेश्वर का रूप बनाकर देशना देने लगा।

जंगल की आग की तरह यत्र-तत्र-सर्वत्र नगर जनों में यह बात फैल गई कि पच्चीसवें तीर्थंकर पधारें है एवं नगर के बाहर उनका समवसरण हुआ है।

लोगों ने सुलसा श्राविका को समाचार देते हुए कहा -'श्राविका...! ब्रह्मा-विष्णु-महेश के दर्शन तो तुमने नहीं किए किन्तु आज तो तुम्हारें इष्ट तीर्थंकर भगवान पधारें हैं। आज तो दर्शन करने चलों।'

श्राविका सुलसा ने मेरू पर्वत की तरह दृढ़ता से कहा -'भोले लोगों की तरह मैं इन्द्रजाल में फँसने वाली नहीं हूँ। मुझे तो मेरे महावीर पर अचल श्रद्धा हैं। भले मेरू पर्वत चलायमान हो जाय। नदी के नीर विपरीत दिशा में बहने लगे। भले सूर्य पश्चिम में क्यों न उदित हो जाय किन्तु तीर्थंकर के वचन अन्यथा नहीं होते। मेरे महावीर ने कहा - 'एक अवसर्पिणी या उत्सर्पिणी में सिर्फ चौबीस तीर्थंकर ही होते हैं। अत: ये पच्चीसवें तीर्थंकर कहाँ से आए ? और फिर यदि भगवान पधारते तो रोम राजी विकस्वर नहीं होते ? अत: यह माया यह इन्द्रजाल है। मैं, मेरे महावीर के अलावा कहीं भी अपना मस्तक नहीं झुकाती।'

सभी गए किन्तु सुलसा श्राविका जब समवसरण में नहीं गई तब अम्बड़ पराजित हो गया। जिन वचन पर दृढ़ श्रद्धा से वह श्राविका सुलसा को विचलित नहीं कर सका।

अपनी सारी माया समेटकर श्रावक के वेश में जब अम्बड़ महाश्राविका के घर-आँगन में पहुँचा तब सुलसा ने अपने साधर्मिक का भावभीना स्वागत किया।

'प्रणाम महाश्राविका ...!' अम्बड़ ने मेरुवत् निश्चल श्रद्धा वाली सुलसा को प्रणाम करके कहा -'मैं चम्पा नगरी से आया हूँ।

'मेरे महाप्रभु महावीर देव के क्या समाचार हैं ?' महाश्राविका ने उसी क्षण प्रश्न किया।

अम्बड़ ने कहा -'भगवान महावीर ने आपको धर्मलाभ का सन्देश भेजा है।'

और सुनकर ही सुलसा भाव विभोर हो गई, उसकी रोमावलि पुलकित हो गई। गदगदित हो वह बोली -'कैसी परम करुणा की भगवान ने मुझ अनाथ पर ...! मुझे धर्मलाभ कहलवाया। ओह ! मैं धन्य हो गई।'

अम्बड़ ने जब स्वयं अपनी आँखों से सुलसा के आनंद को दृष्टिगोचर किया तब उसे एहसास हो गया कि भगवान वर्धमान ने सामान्य घराने की सुलसा को धर्मलाभ का सन्देश भेजकर सही किया है।

अम्बड़ ने कहा -'महाश्राविका ...! मैं राजगृही आ रहा था तब त्रिभुवन प्रकाश महावीर देव ने मेरे द्वारा तुम्हें धर्मलाभ कहलवाया तब मुझे आश्चर्य हुआ था किन्तु मेरी समझ में नहीं आया कि प्रभु ने तुम्हें धर्मलाभ क्यों भेजा और मैंने तुम्हारी कसौटी की ओर तुम उसमें खरी उतरी। ब्रह्मा, विष्णु, महेश और तीर्थंकर की सारी माया मेरी ही थी। इन्द्रजाल नामक विद्या से मैंने ही भ्रम पैदा किया था।'

'किन्तु तुम सच्चें गुरु की सच्ची शिष्या हो।' अम्बड़ बोला-'आज तक मैं दुनिया को अपने चरण में झुकाता रहा हूँ किन्तु आज मेरा मस्तक तुम्हारी दृढ़ श्रद्धा के कारण तुम्हारें चरणों में झुक गए हैं। इतना ही नहीं, मेरी भी श्रद्धा आज से तीर्थंकर भगवान के प्रति दृढ़ हो गई हैं।'

अम्बड़ महाश्राविका की अनुमति लेकर अपने नगर रथनुपुर आ गया।

जिनेश्वर का परम उपासक बनकर वह धर्माराधन में ही लीन हो गया।

बीस स्थानक तप की आराधना कर अम्बड़ ने तीर्थंकर नामकर्म निकाचित किया।

उपरोक्त सारी जीवन कहानी अम्बड़ के पुत्र कुरुबक ने महाराजा विक्रमसिंह के दरबार में सुनाकर कहा -'मैं अम्बड़ क्षत्रिय का सबसे बड़ा

पुत्र होने के कारण पिताजी ने उनका सारा राज्य वैभव मुझे सौंप दिया और स्वयं धर्माराधना करते रहे।'

एक दिन पिताजी ने धर्मध्यान करते हुए सभी आहार का त्याग कर अनशन किया और समाधिपूर्वक मृत्यु को स्वीकार कर अमर भूमि में जा बसे।

पिताजी के विरह में उनकी बत्तीस रानियों ने भी अनशन कर लिया। वे सभी मरकर व्यंतर निकाय में उत्पन्न होकर मोह के कारण राजा हरिशचन्द्र के धनभण्डार में मेरे पिता द्वारा रखा गया उस धरणेन्द्र चूड़ामणि द्वारा प्रदत्त मणिमय सिंहासन में पंचालिका के रूप में रहने लगी।

पाठकगण शायद भूले नहीं होंगे कि कथानक के प्रथम प्रकरण में महाराजा विक्रमसिंह के दरबार में अम्बड़ पुत्र कुरुबक ने अपने पिता जी वीरता भरी दास्तान सुनाना प्रारम्भ की थी एवं कहा था कि मैं एक आवश्यक कार्य के लिए आपके दरबार में उपस्थित हुआ हूँ।

अम्बड़ पुत्र कुरुबक ने कहा -'अब आपके दरबार में उपस्थित होने का कारण मैं आपको बताता हूँ।'

एक दिन मैंने सोचा-क्यों न राजा हरिशचन्द्र के धन भण्डार को खोलकर वहाँ से धन प्राप्त न किया जाय ?

बस मैं, उसी दिन गोरख योगिनी की ध्यान कुण्डली के पास पहुँचा। कुण्डली के नीचे धन-भण्डार का द्वार था जो कि मैं अपनी आठ वर्ष की उम्र से जानता था।

जैसे ही मैंने धन भण्डार का द्वार खोलने का प्रयास किया कि दौड़कर मेरी माता चन्द्रावती वहाँ आती नजर आई। मैं आश्चर्य चकित हो गया। मैंने माता से पूछा -'माताजी ...! आप तो मर चुकी थी, फिर यहाँ कैसे आयी ?'

'बेटा...!' चन्द्रावती बोली -'तेरे पिता के धन भण्डार की रक्षा के

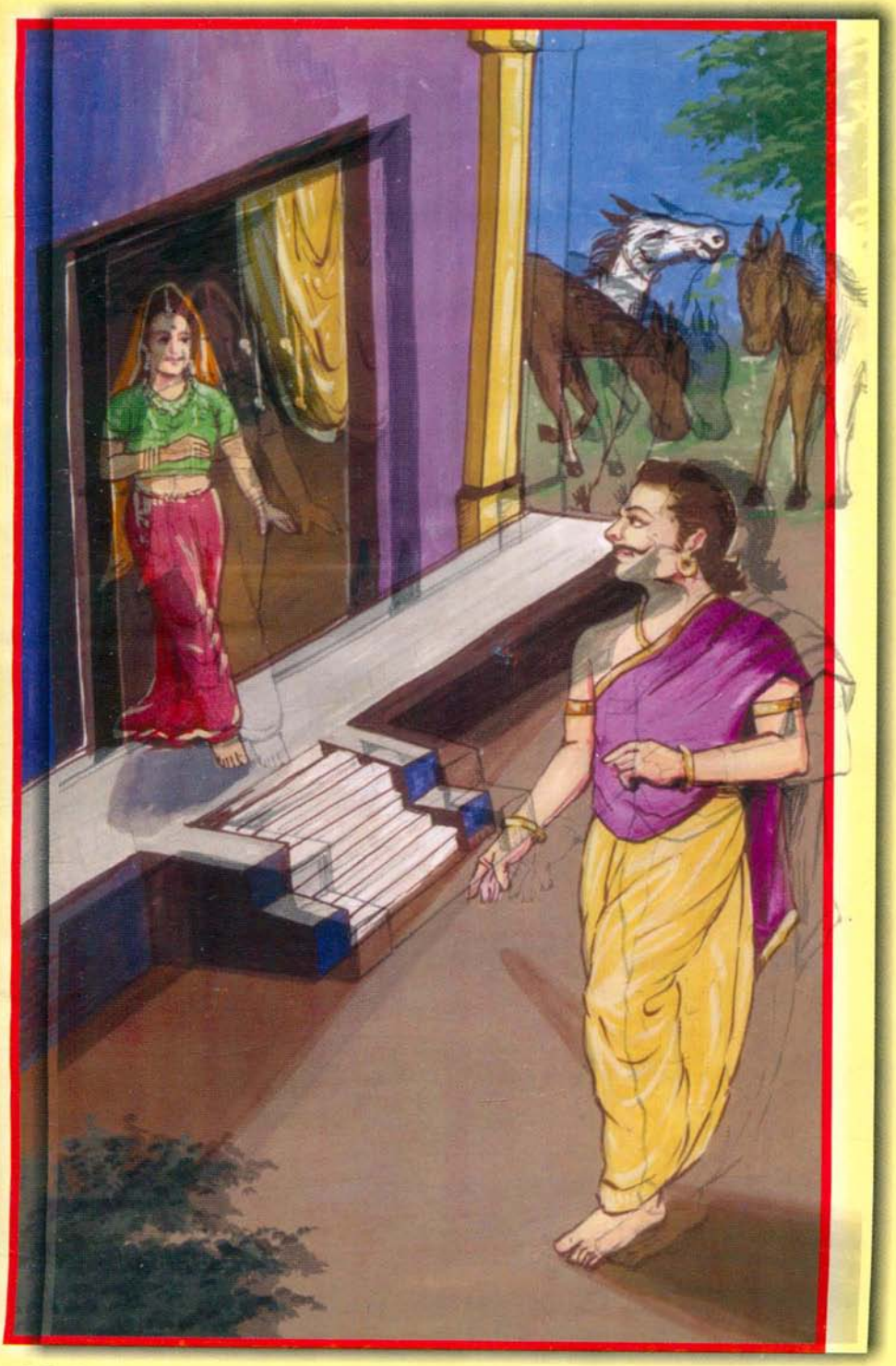

योगिनी के भण्डार की अधिष्ठात्री बनी कुरूबक की माता चन्द्रावती ने भण्डार खोलने आए कुरूबक को समझाकर लौटा दिया।

लिए हम बत्तीसों सहपत्नियाँ मरकर सिंहासन में पंचालिका के रूप में उत्पन्न हुई है ।'

'वत्स...! तू धन भण्डार खोलने का व्यर्थ प्रयास क्यों कर रहा है ।' चन्द्रावती बोली -'यह धन भण्डार तेरे भाग्य में नहीं है । तेरे अलावा यदि अन्य कोई होता तो कभी से उनके सो बरस पूरे हो गये होते । यह तो तू गतजन्म में मेरा पुत्र था, अत: मैं तुझे समझाने आई हूँ ।' चन्द्रावती इतना कहकर अदृश्य हो गई ।

अम्बड़ पुत्र कुरुबक ने विक्रमसिंह राजा से कहा -'राजन् ...! इसके बाद मैंने भी धनभण्डार खोलने का प्रयत्न बन्द कर दिया एवं किसी पुण्यशाली को साथ रख उसे आगे कर भण्डार खोलने का मैंने निर्णय किया है । अत: हे राजन् ...! आप भाग्यशाली है अत: मेरी मदद करें । मेरे साथ चलकर धन भण्डार प्राप्त कराए ।'

कुरुबक की बात में कोई कपट नहीं था अत: महाराजा विक्रमसिंह कुरुबक के साथ योगिनी की ध्यान कुण्डली के निकट आए और धनभण्डार का द्वार खोलने का प्रयास करने लगे ।

अचानक महाराजा विक्रमसिंह ने वहाँ आकाशवाणी सुनी -'हे महाभाग राजन् ...! व्यर्थ धन भण्डार खोलने का प्रय।स क्यों कर रहे हो ? इस धन-वैभव को भोगना तुम्हारे भाग्य में नहीं है । तुम्हारें सारे प्रयास निष्फल हो जाएँगे ।'

आकाशवाणी श्रवणकर राजा विक्रमसिंह तथा कुरुबक दिग् भ्रमित हो गए । पुन: उन्होंने गम्भीर स्वरों में दिव्यवाणी सुनी-

'इस धन भण्डार का भोक्ता मालवदेश की उज्जयिनी नगरी का राजा विक्रमादित्य होगा, इसके अलावा यह धन समृद्धि कोई नहीं भोग सकेगा ।'

दोनों इस भविष्यवाणी को श्रवण कर निराश हो गए एवं अब प्रयत्न करना व्यर्थ समझकर लौट गए । राजा विक्रम सिंह ने महापिता का पुत्र

कुरुबक भटकता रहे यह उचित नहीं है, यह समझ कर अपने ही राज्य में अच्छी आजीविका निकाल कर दे दी।

महाराजा विक्रमसिंह का राज्याश्रम पाकर कुरुबक भी परम सुखी हुआ।

प्रिय वाचकों ...!

इतिहासकारों के कथन अनुसार दो हजार पचास वर्ष पूर्व उज्जयिनी नगरी में राजा विक्रमादित्य का राज्य था एवं वह वीर विक्रम के नाम से जग विख्यात हुआ।

मालवपति विक्रमादित्य के समान परदुखभंजन, पराक्रमी, साहसी एवं निर्भय राजा दुनिया में विरले ही हुए होंगे।

महाराजा विक्रमादित्य ने अपने साहस और पराक्रम से बेताल को साध लिया था। दासानुदास बने बेताल ने विक्रम राजा को अम्बड़ का वह मणिमय दिव्य सिंहासन, हरिशचन्द्र का धन भण्डार एवं स्वर्णपुरुष प्रदान किया था।

विक्रम राजा ने बेताल की सहायता से रोगियों के रोग तथा ऋणग्रस्त लोगों के ऋण चुकाकर अपने नाम से विक्रम संवत चलाकर अपना नाम दिग्दिगान्त में विख्यात किया था, उसकी कीर्ति पुष्प के पराग की तरह दशों दिशाओं में फैल गई थी।

महाराजा विक्रमादित्य के कारण यह भारतभूमि भी धन्यता का अनुभव कर रही हैं। महाराजा विक्रमादित्य तो इस दुनिया को छोड़ कर चले गए किन्तु उनका नाम इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों पर एवं लोगमानस में अमर हो गया।

आज भी महाराजा विक्रमादित्य द्वारा चलाया गया विक्रम संवत् चल रहा है, उनके परोपकार, साहस, वीरता एवं उदारता का विश्वव्यापी गगनभेदी नाद इस पृथ्वी पर गूँज रहा हैं।

॥ समाप्तं अंबड़ चरित्रम् ॥

साध्वी माता पूज्या
श्री तीर्थरत्नाश्रीजी म. सा.

मालवदेश के ओसवाल वंशी मंडोवरा गौत्रीय **श्री पंचमलालजी** की धर्मपत्नि **श्रीमती ताराबाई** ने अपने पति-पुत्र-पुत्रियों के साथ संयम ग्रहण कर मालवा को सर्वप्रथम गौरव प्रदान किया है। आप खाचरौद निवासी **श्री कालूरामजी एवं [illegible]बाई छाजेड** की सुपुत्री थी।

आपने भर युवा वय में अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ मालव ज्योति साध्वी **श्री इन्दुश्रीजी म. सा.** के पास संयम अंगीकार किया था।

आप निरन्तर वर्धमान तप की ओली करते रहते थे कि अचानक आपको कर्मों ने घेर लिया। आपकी देह व्याधिग्रस्त हो गई किन्तु मन [illegible]ि मस्त था। आप कर्मों से [illegible]ाग तक वीर सेनानी की [illegible]दते रहे एवं धारा नगरी की धन्य धरा जहाँ से **श्री मानतुंगाचार्यजी** ने महाप्रभाविक **श्री भक्तामर स्तोत्र** [illegible] मुखरित किया था ऐसे **भक्तामर महातीर्थ अभ्युदय धाम** में आप समाधिस्थ हो गए।

अल्प समय में आपने अपने परिवार को संयम राह दिखाकर अपना एवं परिवार का भी मार्ग श्रेयस्कर बनाया।

वंदन हो ऐसी साध्वीमाता को।

– महेन्द्रकुमार जैन

वाणी के जादूगर, पूज्य आचार्य देव

श्री जितरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

परम पूज्य गुरूदेव आचार्य भगवंत श्री जितरत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा. ने मालव देश के गौतमपुरा में मंडोवरा गौत्रीय ओसवालवंशी सेठ श्री मनसुखलालजी के यहाँ पौत्र के रूप में जन्म लेकर बाल्यवय में अपने पिताश्री के साथ संयम ग्रहण कर पूज्य पंन्यास प्रवर श्री अभ्युदयसागरजी म. सा. के प्रशिष्य बनकर जैन शासन की प्रभावना में रत है।

आप वाणी के जादूगर है ओजस्वी प्रवचनकार होने के साथ-साथ आप चिंतक एवं सिद्धहस्त लेखक भी है। आज तक आपने करीब 180 पुस्तकों का लेखन किया है।

आपके प्रवचनों से प्रभावित होकर प्रतापगढ़ श्रीसंघ ने मालव भूषण प. पू. आचार्य श्री नवरत्नसागरसूरिजी म.सा. के सानिध्य में हजारों की मानव मेदनी के बीच व्याख्यान वाचस्पति का गौरवभरा पद अर्पण किया है।

आपके तप, त्याग और विद्वता के कारण आप सम्पूर्ण मालव देश में जाने माने और पहचाने जाते है। आपकी कार्यशैली एवं सफल आयोजनों का लोहा सम्पूर्ण देश मानता है।

आपने श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ तालाब एवं भक्तामर महातीर्थ, धार जैसे तीर्थों का सफलतम मार्गदर्शन कर श्रेष्ठकोटि के महातीर्थ बनने का गौरव दिलवाया है। आपके मार्गदर्शन में सात जगह गौशाला संचालित हो रही है।

आप आगम शास्त्रों के साथ-साथ व्याकरण एवं साहित्य के भी विद्वान है। 45 आगम परिचय की वाचना देकर आपने सूरत शहर को आश्चर्यमुग्ध कर दिया था।

इस बार 'लई जा जो संदेश प्रवासी' नामक पुस्तक का प्रकाशन आपके लिये किया है। आपश्री ने अभी तक लगभग 180 पुस्तकों का लेखन कर प्रकाशित करवाई है। जिसे पढ़कर आप स्वयं ही गुरूदेवश्री के लिये अभिप्राय बना लेगें।

वर्धमान तपोनिधि, पूज्य आचार्य देव

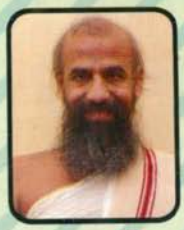

श्री चन्द्ररत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा.

पूज्य गुरूदेव आचार्य भगवंत श्री चन्द्ररत्नसागरसूरीश्वरजी म. सा. ओसवाल वंशीय मंडोवरा गौत्रीय श्री मनसुखलालजी मंडोवरा के पौत्र है और गौतमपुरा के निवासी है। बाल्यवय में संयमी बन आपने द्रव्यानुयोग में अपनी रूचि बनाकर द्रव्यानुयोग में महारत हासिल की।

परम पूज्य गच्छाधिपति आचार्य भगवंत श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी म. सा. ने अहमदाबाद वीतराग सोसायटी में स्वाध्याय कराते समय कहा था - तू तो उपाध्याय है। आप बाल्यकाल से तप त्याग और क्रिया में गहरी रूचि लेते रहे है। सभी क्रियाएं अप्रमत्त भाव से तथा खडे-खडे करते है।

आपने 13 वर्ष की वय में संयम ग्रहण कर उसी वर्ष वर्धमान तप का पाया डालकर मात्र 32 वर्ष की वय में वर्धमान तप की सौ ओली पूर्ण कर वर्ल्ड रेकार्ड बनाया है। आज तक 32 वर्ष की वय में किसी भी मुनि ने सौ ओली पूर्ण नहीं की है।

आपने 500 आयंबिल संलग्न, 1500 आयंबिल संलग्न, फिर 2700 आयंबिल संलग्न किये जो कि अपने आप दस दोय तप-बीस स्थानक तप अनवरत किया। बीसो ओली संलग्न कर रेकार्ड बनाया इतना ही नहीं अन्तिम ओली में आपने 20 उपवास एक साथ विहार में करके तप [illegible] बजाया है। आपने फिर से वर्धमान तप [illegible] भी मुनि ने सौ [illegible] कर ली है। याने

आपने 500 आयंबिल संलग्न [illegible] है।

बिल संलग्न, फिर 2700 आयंबि[illegible] लेकर भगवती जो कि अपने आप दस दोय [illegible] किया है। एक क तप अनवरत किया। बीसो ओ[illegible] एक कीर्तिमान र्ड बनाया इतना ही नहीं अन्ति[illegible]

[illegible] साथ विहार [illegible]

आज तक आपने शताधिक ग्रन्थों का सफल सम्पादन भी किया है। इस लई जा जो संदेश प्रवासी पुस्तक के सम्पादक भी आप ही है।